६२ वर्षों से प्रकाशित

'कौल-कल्पतरु'

चण्डी

सम्पादक :: रमादत्त शुक्ल, ऋतशील शर्मा

वर्ष ६२ :: 'दुर्मुख' संवत् २०६० वि० (सन् २००४ ई०) :: संख्या १०-१२

नया वर्ष : 'हेमलम्ब' संवत् २०६१ विक्रमी

(२१ मार्च, २००४ से ८ अप्रैल, २००५ तक)

नया वर्ष रविवार, **२१ मार्च २००४** से प्रारम्भ हो रहा है। नए २०६१ **विक्रम-संवत्** का नाम है—'**हेमलम्ब**'। पञ्चाङ्गों के अनुसार '**हेमलम्ब**'—नामक संवत् का **धन-धान्य-सूचक सामान्य फल** इस प्रकार है—

१. '**हेमलम्ब**'-संवत् में सूखा, दुर्भिक्ष आदि कष्ट होंगे।

२. **राजा सूर्य** होने से वर्षा कम होगी। **सूर्य भगवान्** तेज, प्रकाश, ज्ञान, कर्म, भक्ति आदि के प्रेरक हैं। अत: '**हेमलम्ब**'-संवत् में '**ज्ञान-कर्म-भक्ति**'—तीनों के लिए अच्छी सम्भावनाएँ हैं।

३. **मन्त्री मङ्गल** होने से **सुख की वृद्धि की सम्भावना** है। **मङ्गल भगवान्** शौर्य, पराक्रम के प्रेरक हैं। अत: '**हेमलम्ब**'-संवत् में देश के और अधिक शक्तिशाली होने का सुयोग है।

४. **सस्येश शुक्र** से '**हेमलम्ब**'-संवत् में वर्षा, गेहूँ, धान, ईख, फल पर्याप्त मात्रा में होने की सम्भावना है।

५. **दुर्गेश मङ्गल** से नए-नए करों की सम्भावना है।

६. **धनेश शुक्र** होने से व्यापारिक गतिविधियों के सन्तोष-जनक होने की सम्भावना है।

७. **मेघेश चन्द्र** होने से रसीले पदार्थों की बहुलता के योग हैं।

८. **रसेश सूर्य** होने से तिल्ली, तेल के मँहगे होने की सम्भावना है।

९. **फलेश चन्द्र** होने से लोगों में व्यय करने की प्रवृत्ति बढ़ने की सम्भावना है।

१०. **नीरसेश शुक्र** होने से सोना, चाँदी के मूल्य में वृद्धि की सम्भावना है।

'**हेमलम्ब**'-संवत् के उक्त सामान्य फल के अतिरिक्त अन्य प्रेरणा-दायी बातों को जानने के लिए हमें—'**हेमलम्ब**'-नाम का क्या अर्थ है? अथवा '**हेमलम्ब**'-नाम से कौन-कौन-सी प्रेरणाएँ प्राप्त हो रही हैं? यह जानना बहुत आवश्यक है। अत: आइए, पहले देखें कि '**हेमलम्ब**'-नाम का क्या अर्थ है?

यहाँ यह उल्लेखनीय है कि अनूठे **विक्रम संवत्** में देवताओं को प्रेरणा देनेवाले **वृहस्पति** को केन्द्र मानकर **६० वर्षों का एक चक्र** बनाया गया है। **वृहस्पति**—एक **राशि** में लगभग १ वर्ष रहते हैं। इस प्रकार **वृहस्पति** के एक राशि से दूसरे राशि के संक्रमण के आधार पर **६० वर्षों का एक मण्डल** है, जो क्रम से आवर्तित हो रहा है। इस मण्डल का **३१वाँ क्रम**—'**हेमलम्ब**' है। ६० वर्षों के उक्त मण्डल में प्रारम्भिक २० वर्ष '**ब्रह्मा**' के माने जाते हैं। मध्य के २० वर्ष '**विष्णु**' के और अन्तिम २० वर्ष '**शिव**' के माने जाते हैं। **३१वाँ** '**हेमलम्ब**'-**संवत्** आधा मण्डल पूरा होने व '**ब्रह्मा**' तथा '**विष्णु**' के अन्तिम दशक के प्रारम्भ होने का सूचक है।

प्रकाशक

परा-वाणी आध्यात्मिक शोध-संस्थान

'श्रीचण्डी-धाम', प्रयाग-राज (उ०प्र०)-२११००६ अनुदान १०/-

'हेमलम्ब'—नाम से संस्कृत भाषा में कोई स्वतन्त्र शब्द नहीं है। सम्भवत: **'हेम'** और **'लम्ब'**—इन दो शब्दों को मिलाकर **विक्रम संवत्** के ६०-६० वर्षों के क्रम के अन्तर्गत **३१वें वर्ष का नाम 'हेमलम्ब'** रखा गया है।

वामन शिवराम आप्टे कृत **संस्कृत-हिन्दी कोश** के अनुसार **'हेम'** और **'लम्ब'**-शब्दों का अर्थ इस प्रकार है—

१. **हेमन्** (नपुं०)—(१) सोना, (२) जल, (३) बर्फ, (४) धतूरा, ५ केसर का फूल।

२. **हेमग:** (वि०)—(१) गरुड़, (२) सिंह, (३) सुमेरु पर्वत, (४) ब्रह्मा का नाम, (५) विष्णु का नाम।

३. **लम्ब**—(१) नीचे की ओर लटकता हुआ, झूलता हुआ, लम्बमान्, दोलायमान। (२) लटकता हुआ, अनुषक्त (सम्बद्ध, संलग्न)। (३) बड़ा, विस्तृत। (४) विस्तीर्ण। (५) लम्बा, ऊँचा।

'संस्कृत-हिन्दी-कोष' के उक्त विवरण के अनुसार **'हेम'** और **'लम्ब'**—दोनों शब्दों के अर्थों पर हम यदि ध्यान दें, तो समझने-बूझने हेतु आनेवाले नव-वर्ष **'हेमलम्ब'** से कुछ बहु-उपयोगी सन्देश हमें इस प्रकार सुनाई देते हैं—

१. **दोलायमान सुखानुभूति।**

२. **विस्तृत सुख-समृद्धि की आधार-भूमि।**

३. **धर्म एवं शक्ति के प्रतीक 'गरुड़', 'सिंह' से सम्बन्धित काल।**

४. **जागरण एवं लक्ष्य-प्राप्ति के प्रतीक 'ब्रह्मा', 'विष्णु' से सम्बन्धित काल।**

५. **सर्वतोमुखी कल्याण के प्रतीक 'सुमेरु' से सम्बन्धित काल।**

संक्षेप में, **'सर्वे भवन्तु सुखिनः, सर्वे भवन्तु निरामयाः'** की ओर अग्रसर होने की सुन्दर बेला / अवसर हमारे सम्मुख है। आवश्यकता है कि हम अपनी त्रुटियों को परिमार्जित करते हुए, **महत् लक्ष्य** की ओर ध्यान दें। **'काल'** हमारे अनुकूल है। अत: हमारे शत्रुओं के क्षुद्र स्वार्थ प्रभावी नहीं होंगे।

'भारत उदय', 'उज्ज्वल भारत', 'स्वर्णिम चतुर्भुज' आदि नाना प्रकार के उद्घोष **'हेमलम्ब'**-संवत् के नाम और उक्त अर्थों को स्पष्ट रूप से सत्य सिद्ध कर रहे हैं। यही नहीं, हमारे शत्रु के दुष्ट कार्यों का सत्य अब स्वत: जिस प्रकार उद्घाटित हो रहा है और उस पर नियन्त्रण हो रहा है, उससे भी **'हेमलम्ब'**-नाम की सार्थकता भली-भाँति स्पष्ट हो रही है। ऐसा प्रतीत हो रहा है कि हम अपने महान् लक्ष्य की ओर अग्रसर हो सकते हैं।

अपने लोगों के लिए आवश्यकता है, तो केवल सच्चाई एवं परिश्रम की। स्वयं **प्रत्यक्ष भगवान् सूर्य** दिव्य आकाशीय मन्त्रि-मण्डल के **राजा** हैं, अत: सच्चे रूप में **ज्ञान, कर्म, भक्ति** को हमें अपनाना होगा। **सर्व-मङ्गल-प्रद भगवान् भौम** दिव्य आकाशीय मन्त्रि-मण्डल के **मन्त्री** हैं; अत: **सद्-गुणों** को भी हमें अपनाना ही होगा।

'कुल-वाणी-रत्न' पं० सतीशकुमार उपाध्याय के अनुसार **'हेमलम्ब'**-नाम में **'ह'**—आकाश, **'ऐं'**—वाणी, **'लं'**—पृथ्वी, **'वं'**—अमृतीकरण का सूचक है, जो **पर-ब्रह्म-स्वरूपा महा-लक्ष्मी** का द्योतक है। अतएव **'हेमलम्ब'**-संवत् मुख्य रूप से **महा-लक्ष्मी के आह्वान** एवं **उपासना** का बोधक है। श्रीयुत उपाध्याय जी के ये सूत्र मननीय हैं। **बाबाश्री** द्वारा रचित **'महालक्ष्मी-आरती'** के निम्न-लिखित पद देखिए, इससे **'हेमलम्ब'** और **महा-लक्ष्मी की स्वर्ण-छटा** का सम्बन्ध स्पष्ट होगा—

कान्त्या काञ्चन-सन्निभ-हिम-गिरि-आसीना—माँ हिम-गिरि आसीना।
उन्नति-सन्तति-व्युष्टयुत्कृष्ट-करा-भूतिः—श्रीतत्त्व-करा-भूतिः।
जग-जीवन-सुख-कारण-स्वर्ण-छटा-भूतिः। जय देवि! जय देवि!!

संक्षेप में नया **'हेमलम्ब'**-संवत्—**माँ महा-लक्ष्मी, महा-त्रिपुर-सुन्दरी, भगवती पीताम्बरा, भगवती कमला** की आराधना का विशेष काल है। **'ज्ञान-कर्म-भक्ति'**—पूर्वक उपासना कर हम सभी अभीष्ट फल प्राप्त करें, यही **माता** से प्रार्थना है।

***

वासन्तिक नवरात्र : कुछ विशेष बातें

- **नव-रात्र**'—व्रत हिन्दुओं का बहुत **प्राचीन धार्मिक अनुष्ठान** है। इसका महत्त्व सदा रहा है और आज भी यह पूर्व-वत् लोक-प्रिय है।
- 'ब्रह्म-पुराण' के अनुसार ब्रह्मा ने **चैत्र मास के शुक्ल पक्ष के प्रथम दिन** सूर्योदय के समय संसार का निर्माण किया और उसी दिन से '**काल**'-गणना का शुभारम्भ हुआ। अत: उस दिन सभी पापों को नाश करनेवाला कृत्य करना चाहिए।
- 'भविष्य पुराण' के अनुसार **चैत्र शुक्ला प्रतिपदा** ब्रह्मा द्वारा सर्व-श्रेष्ठ तिथि घोषित हुई है।
- 'श्रीमद्-देवी-भागवत' के अनुसार **सीता जी** की पुनर्प्राप्ति और शत्रु पर विजय पाने पर **भगवान् रामचन्द्र** ने '**नव-रात्र**'-व्रत का अनुष्ठान किया था। इससे स्पष्ट होता है कि '**नव-रात्र**'-व्रत की परम्परा अति प्राचीन काल से प्रचलित है।
- 'ब्रह्म-वैवर्त-पुराण' के अनुसार '**गो-लोक**' में '**रास-मण्डल**' के बीच **वसन्त-काल** में **परमात्मा श्रीकृष्ण** ने भक्ति-पूर्वक **भगवती दुर्गा की स्तुति** की थी। इससे भी यह स्पष्ट होता है कि **वसन्त** में **भगवती की पूजा की परम्परा** अति प्राचीन है।
- अनेक पुराणों में '**नव-रात्र**'-व्रत की विधियाँ बताई गई हैं।
- 'भविष्योत्तर-पुराण' के अनुसार—'**नव-रात्र**' के पूजा-व्रत का अधिकार सब किसी को है। सभी वर्ण, जाति के लोग इसे कर सकते हैं।
- '**नव-रात्र**'-व्रत के अनुष्ठान का विधान **महर्षि व्यास** ने **जनमेजय** को बताते हुए यह कहा है कि लोग इसमें **सर्व-दु:ख-विनाशिनी** और **ऐश्वर्य-सम्पत्-प्रदा भगवती दुर्गा की आराधना** करते हैं।
- **चैत्र प्रतिपदा** को **नव-वर्ष के स्वामी की पूजा** होती है। इस दिन—गृहस्थों के द्वारा **तोरण** एवं **पताकाएँ** लगाई जाती हैं। **तेल लगाकर स्नान** किया जाता है। **नीम की पत्तियाँ** खाई जाती हैं। **संवत् का नाम, फल** जाना जाता है। वर्ष के राजा, मन्त्रियों, अन्नों एवं द्रवों आदि के विवरण जाने जाते हैं।
- **चैत्र प्रतिपदा** को '**कुम्भ**' **की स्थापना** कर **भगवती दुर्गा का आह्वान** कर पूजन किया जाता है। फिर यह पूजा **नवमी** तक की जाती है। नव दिन तक एक बार भोजन किया जाता है। प्रात:, सन्ध्या और अर्द्ध-निशा—नित्य तीन बार पूजा होती है।
- '**नव-रात्र**' में दिन-रात '**अखण्ड दीप-ज्योति**' प्रज्वलित की जाती है।
- '**नव-रात्र**' के नौ दिनों में **मौन-व्रत**-पूर्वक प्रत्येक इन्द्रिय को अन्तर्मुखी कर **महा-शक्ति** का **ध्यान-पूजन-जप** किया जाता है।
- '**नव-रात्र**'—'कुण्डलिनी' के विकास का सबसे अधिक उपयुक्त काल है।
- '**नव-रात्र**'—बहु-कल्याणकारी **नव शक्तियों** से संयुक्त करता है। एक-एक तिथि में एक-एक शक्ति (**नव-दुर्गा**) का पूजन होता है।
- '**नव-रात्र**'—शाक्तों का महा-पर्व है। इससे बढ़कर उनके लिए दूसरा '**पर्व**' नहीं।
- **चैत्र के नव-रात्र** के समय ही **राजा सुरथ** को माँ का साक्षात्कार और वर प्राप्त हुआ था।
- '**नव-रात्र**'-व्रत—प्रवृत्ति तथा निवृत्ति, दोनों मार्गों के लिए है। प्रवृत्ति-मार्ग में '**सर्वा-बाधा-विनिर्मुक्ति**' तथा '**धन-धान्य-सुत-विजय**' होती है। निवृत्ति-मार्ग में '**सैषा प्रसन्ना वरदा, नृणां भवति मुक्तये**'—मोक्ष की प्राप्ति होती है।
- बाह्य रूप में '**नव-रात्र**'—महोत्सव एक प्रकार का विजयोत्सव है, जो **दुर्गा देवी** के द्वारा राक्षसों को मार कर उन पर विजय प्राप्त करने के उपलक्ष्य में मनाया जाता है। आध्यात्मिक रूप में '**नव-रात्र**'—महोत्सव में साधक को क्रमश: उन्नति कर **जीवत्व से शिवत्व की ओर** अग्रसर होने की प्रेरणा प्राप्त होती है।

- 'नव-रात्र' में **महा-काली, महा-लक्ष्मी, महा-सरस्वती का ध्यान-पूजन**—हमारे कु-संस्कारों, दुर्वासनाओं तथा आसुरी वृत्तियों को नष्ट कर, उनके स्थान पर सद्-गुणों को स्थापित कर '**आत्म**'-ज्ञान की प्राप्ति के लिए होता है।
- 'नव-रात्र'-पूजा करनेवालों को '**कुमारी**'-पूजा भी करनी होती है। दो वर्ष से दस वर्ष तक की बालिकाओं को '**कुमारी**' कहते हैं। एक साथ **नौ कुमारियों का पूजन** उत्तम माना जाता है। नौ कुमारियों को क्रमशः **१ कुमारिका, २ त्रि-मूर्ति, ३ कल्याणी, ५ काली, ६ चण्डिका, ७ शाम्भवी, ८ दुर्गा** और **९ सुभद्रा** मानकर पूजा की जाती है।
- '**वासन्तीय नवरात्र**' की **सप्तमी-अष्टमी-नवमी** के सम्बन्ध में स्पष्ट रूप से यह निर्देश है कि—

  चैत्रे मासि सिते पक्षे, सप्तम्यादि-दिन-त्रये।
  पूजयेद् विधि-वद् दुर्गां, दशम्यां तु विसर्जयेत्॥

  अर्थात् **चैत्र** मास के **शुक्ल पक्ष** की **सप्तमी, अष्टमी** और **नवमी**—इन तीन दिनों में विधि-पूर्वक भगवती दुर्गा की पूजा करे और **दशमी** के दिन विसर्जन करे।
- '**चैत्र नवरात्र**' के सम्बन्ध में महत्त्व-पूर्ण वचन हैं—

  चैत्रे मासि सिते पक्षे, सप्तम्यादि-दिन-त्रये।
  पूजयेद् विविधैर्द्रव्यैर्लवङ्ग-कुसुमैस्तथा॥
  नाना-विधैश्च बलिभिर्मेघाभैर्दोष-वर्जितैः।
  विचित्राभरणैः पार्थ! पट्ट-वस्त्रादिभिस्तथा॥
  एवं यः कुरुते पूजां, वर्षे वर्षे विधानतः।
  ईप्सितान् लभते कामान्, पुत्र-पौत्रादिकान् नृप!॥

  अर्थात् हे राजन्! **चैत्र** मास के **शुक्ल-पक्ष** की **सप्तमी** आदि तीन दिनों में भगवती की विविध द्रव्यों, लवङ्ग—पुष्पों, दोष-हीन कृष्ण-वर्ण के छागादि नाना प्रकार की बलियों, चित्र-विचित्र आभूषणों और रेशमी वस्त्रों से पूजा करे। हे पार्थ! इस प्रकार जो प्रति-वर्ष यथा-विधि **वासन्तीय पूजा** करता है, वह पुत्र-पौत्रादि सभी इच्छित वस्तुओं को प्राप्त करता है।
- 'कालिका-पुराण' में '**चैत्र नवरात्र**' की अष्टमी की पूजा का निर्देश हैं—

  सिताष्टम्यां तु चैत्रस्य, पुष्पैस्तत्-काल-सम्भवैः।
  अशोकैरपि यः कुर्यान्मन्त्रेणानेन पूजनम्॥
  न तस्य जायते शोको, रोगो वाप्यथ दुर्गतिः।

  अर्थात् **चैत्र शुक्ला अष्टमी** में उस काल में विकसित होनेवाले पुष्पों से, विशेष कर अशोक के पुष्पों से मन्त्र (**ॐ दुर्गे दुर्गे रक्षणि स्वाहा**) का उच्चारण करते हुए जो देवी की पूजा करता है, उसे रोग, शोक या किसी प्रकार का कष्ट नहीं होता।
- 'देवी-पुराण' में **चैत्र शुक्ला नवमी** की पूजा का निर्देश है—

  नवम्यां पूजयेद् देवीं, महिषासुर-मर्दिनीम्।
  कुंकुमागरु-कर्पूर-पानान्न-ध्वज-तर्पणे!॥
  कुंकुमैर्मरु-पत्रैश्च, विजयाख्य-पदं लभेत्।

  अर्थात् **चैत्र शुक्ला नवमी** के दिन कुंकुम, कर्पूर, पान, अन्न, ध्वज, तर्पण द्वारा कुंकुम तथा मरु-पत्र (कपास के पत्ते) से भगवती महिषासुर-मर्दिनी की पूजा करे। इस प्रकार पूजा करनेवाला 'विजय'-नामक पद को प्राप्त करता है।
- '**नव-रात्र**'-व्रत के सम्बन्ध में यह निर्देश भी है—

  १. अकिञ्चन, निर्धन, अशक्त प्राणी '**नव-रात्रि-व्रत**' न करे।
  २. एक बार हविष्यान्न करे।
  ३. यदि **नौ दिन** व्रत न रख सके, तो **सप्तमी** से अथवा **प्रतिपदा** से **पञ्चमी नवमी** व्रत रखे।
  ४. यदि कुछ भी सम्भव न हो, तो केवल '**अष्टमी**'-व्रत रहे। मात्र एक '**अष्टमी**'-व्रत से भी '**नव-रात्रि-व्रत**' का फल होता है।

□□□

हम सबकी उपास्य देवता :

परा-शक्ति भगवती चण्डिका

* 'आम्नाय-धुरन्धर' पण्डित हरिशास्त्री जी दाधीच

वेद, उपनिषद्, स्मृति, पुराण और दर्शन आदि शास्त्र पढ़ने, देखने, सुनने और विचारने से यह निर्णय प्राप्त होता है कि **भगवती चण्डिका** ही सर्वप्रथम सृष्टि में पूजी गईं और अब भी पूजी जाती हैं तथा आगे भी पूजी जाएँगी और हम सबकी वही उपास्य देवता हैं। **ब्रह्मा, विष्णु, शिव, इन्द्र, वरुण, कुबेर, यम** आदि देवों ने और **यक्ष, किन्नर, सिद्ध चारणों** ने तथा **भूतादि** ने भी इन्हीं की आराधना की है। इसमें सन्देह नहीं कि सबमें इन्हीं की सत्ता है। **भगवती चण्डिका** से पर कोई तत्त्व नहीं है । यदि है, तो यही एक है। यही आत्मा, यही परमात्मा, यही ईश्वर, यही जीव, यही स्थूल, यही सूक्ष्म, यही कारण, यही कार्य, यही इस पार और यही उस पार है । पर-**ब्रह्म** के व्यावहारिक नाम ही **महा - माया, विद्या, प्रकृति, अम्बा, भगवती, शिवा, शक्ति, दुर्गा, चण्डिका** हैं ।

भगवती चण्डिका के प्रभाव और प्रसाद को ही प्राप्त कर **ब्रह्मादि देव** पूजित हुए और अपने-अपने कार्य में समर्थ हुए। सृष्टि-क्रम ज्यों-ज्यों बढ़ता चला, विचार और उपाधि-भेद से, दैवी प्रभाव से और-और देवताओं की—**विष्णु, शिव, सूर्यादि की उपासना** बढ़ती गई। इस क्रम से युगान्तर में बहुत-सी उपासनाएँ बढ़ती रहीं, परन्तु यह कहना सु-प्रमाणित है कि आदि 'कृत (सत्य) युग' में एक '**शक्ति**' की ही उपासना थी । फिर '**शिव-शक्ति**' दोनों की रही । यह उपासना **शक्ति - कृत** प्रभाव और **अद्वैत - बोध** के लिए **भगवती** ने ही प्रचारित की, ऐसा तत्कालीन आगमों के वाक्य बोधित करते हैं। फिर **विष्णु** की, तदनन्तर **ब्रह्म** की, परन्तु ये सब उपासनाएँ **शक्ति-सहित** ही थीं—**ब्रह्मा-सावित्री, लक्ष्मी-नारायण** एवं **शङ्कर** और **गौरी** साथ ही पूजे जाते थे, ऐसा बहुत जगह प्रमाण मिलता है ।

बढ़ते-बढ़ते नाना देवोपासनाएँ प्रचलित हुईं । वे अब भी चल रही हैं। तत्त्व-दृष्टि से देखें, तो वे सभी उपासनाएँ '**शक्ति**' की ही उपासना हैं क्योंकि शास्त्र-कार कहते हैं—'**सर्वे देवाः स - शक्तयः**' अर्थात् **सभी देव शक्ति-सहित** हैं । ठीक भी है, '**शक्ति**' न हो, तो वे देव किसी कार्य के करने में समर्थ नहीं होते । कार्य करना दूर, वे '**शक्ति**' के बिना फड़क भी नहीं सकते । **भगवान् शङ्कराचार्य** 'सौन्दर्य-लहरी' में कहते हैं—**शिव** (पुरुष) यदि **शक्ति** से, चेतना से युक्त रहता है, तभी कार्य-क्षम हो सकता है । बिना **शक्ति** के वह फड़क भी नहीं सकता।

'**शक्ति**' ही समस्त संसार के व्यवहार का कारण है। यही '**महा-माया**', '**विद्या**' है। यही जीवों के '**बन्ध**' का कारण है, तो यही जीवों के '**मोक्ष**' का कारण है । यह बात ठीक भी है। जो **बन्धन** का कारण होता है, वही **मोक्ष** का कारण हो सकता है । यह बात '**सप्तशती**' के निम्न उपदेश से स्पष्ट हो जाती है—

'**सा विद्या परमा मुक्तेर्हेतु-भूता सनातनी । संसार-बन्ध-हेतुश्च सैव सर्वेश्वरेश्वरी ॥**'

अर्थात् सुमेधा महर्षि राजा सुरथ को उपदेश दे रहे हैं कि—वह **विद्या** (भगवती) मुक्ति का परम हेतु, असाधारण कारण है । वह **सनातनी** है और हे राजन् ! वही सब ईश्वरों की ईश्वरी (जगदम्बा) संसार-बन्धन का भी कारण है ।

अब यह बात उपस्थित होती है कि **भगवती** को ही **उपास्य देवता** क्यों बताते हो ? **विष्णु, शिवादि,**

राम, कृष्णादि को क्यों नहीं ? तो सुनिए—

संसार की यह रीति है कि जो निग्रहानुग्रह-समर्थ हो, जो कर्तुं-अकर्तुं अन्यथा-कर्तुं समर्थ हो, वही **उपास्य** होता है अर्थात् **सर्व-समर्थ** हो, ऐसा **उपास्य देव** होना चाहिए। विचार करने से यह सत्य ही प्रतीत होगा कि संसार में जो **सर्व-समर्थ** होता है, वही सेव्य, ध्येय, आराध्य, मान्य, पूज्य और आश्रयणीय होता है। **सर्व-सामर्थ्य** की दृष्टि से हम देखते हैं, तो भगवती चण्डिका ही हमारे आगे आती हैं, अन्य देव नहीं। जो '**निग्रह**' कर सकता है, वह '**अनुग्रह**' भी कर सके; जो बिगाड़ सके, वह बना भी सके, दोनों सामर्थ्यवाला ही मान्य होता है। '**सप्तशती**' में यह निर्णय हो जाता है। देखिए—

रोगानशेषानपहंसि तुष्टा, रुष्टा तु कामान् सकलानभीष्टान्।
त्वामाश्रितानां न विपन्नराणाम्, त्वामाश्रिता ह्याश्रयतां प्रयान्ति॥

अर्थात् देव-गण स्तुति करते हुए कहते हैं—हे जगदम्ब ! आप सन्तुष्ट हुईं, तो सभी रोगों को दूर कर देती हो, परन्तु रुष्ट होने पर सभी अभीष्ट कामों को भी नष्ट कर देती हो।

बात सच भी है कि जो प्रसन्न होकर किसी को निहाल न कर सके और कुपित होकर किसी का कुछ बिगाड़ न सके, ऐसा स्वामी पुरुष हो या स्त्री, उसे कोई नहीं मानता। प्राचीन शास्त्रकारों ने ठीक ही कहा है—

'प्रसादो निष्फलो यस्य, कोपोऽपि च निरर्थकः। तं न भर्तारमिच्छन्ति, षण्ढं पतिमिव स्त्रियः॥'

यही बात भारवि महा-कवि ने '**किरातार्जुनीय**' में कही है—

अबन्ध्य-कोपस्य विहन्तुरापदां, भवन्ति वश्याः स्वयमेव देहिनः।
अमर्ष-शून्येन जनस्य जन्तुना, न जात-हार्देन न विद्विषादरः॥

इसलिए जो **कर्तुमकर्तुमन्यथा-कर्तुं** समर्थ हो, वही मान्य, पूज्य तथा आश्रयणीय होता है। यह लक्षण **भगवती महा-माया चण्डिका** में सतत व्याप्त है। अतः वही हम सबकी **उपास्य देवता** हो सकती हैं।

सर्व-सामर्थ्य का उक्त भाव '**सप्त-शती**' में अन्यत्र भी दिखाया है। जैसे, **शक्रादि देव** स्तुति करते हुए कहते हैं—हे जगदम्ब ! '**चित्ते कृपा समर-निष्ठुरता च दृष्टा, त्वय्येव देवि वरदे ! भुवन-त्रयेऽपि।**'

चित्त में **कृपा** और संग्राम में **निष्ठुरता** (कठोरता)—ये दोनों हमने आप ही में देखा। त्रिभुवन में ऐसी कोई देवता नहीं, जिसमें ऐसे **दोनों भाव** एक कालावच्छेद से रहते हों। वैसे तो '**चण्डी**' नाम ही **भगवती चण्डिका** के **कोप** की सफलता बतलाता है। '**चडि-कोपे**' धातु से '**चण्डी**'—शब्द बना है। सफल **कोपवाली** देवता का नाम '**चण्डी**' है। इसी से वायु आदि देवों को भी भय-दायकता से, इस **कोप** को **पर-ब्रह्मता** का लिङ्ग (लक्षण) माना है। '**चण्डी**' पद की ऐसी ही व्याख्या करते हुए '**गुप्तवती**'-टीकाकार ने लिखा है—

'भीषास्माद् वातः पवते भीषोदेति सूर्यः। भीषास्मादग्निश्चेन्द्रस्य मृत्युर्धावति पञ्चमः॥'

साथ ही '**चण्ड-भानु, चण्ड-वाद**' इत्यादि पद-प्रयोगों को इयत्तानवच्छिन्न असाधारण गुण-शालिता-परक बतलाया है। इसी कारण **भगवती चण्डिका** के शस्त्रास्त्रों को भी इन्द्रादि देवों ने प्रणाम किया है और उनसे अपनी रक्षा की प्रार्थना की है—

'शूलेन पाहि नो देवि ! पाहि खड्गेन चाम्बिके ! घण्टा-स्वनेन नः पाहि, चाप-ज्या-निःस्वनेन च॥''

सप्त-शती के उक्त मन्त्र प्रसिद्ध हैं। ऐसे सफल **कोपवाली भगवती चण्डिका** ही **सर्व-समर्थ** हैं, इसमें सन्देह नहीं। वही हम सबकी **उपास्य** देवता हैं।

सामर्थ्य-विशेष को प्रदर्शित करने के लिए यहाँ हम एक पद्य '**भगवद्-गीता**' का उद्धृत करते हैं और उसकी तुलना '**सप्तशती-रहस्य**' के एक मन्त्र से करते हुए यह बतलाते हैं कि **सातिशय सामर्थ्य**, जो कहीं किसी देव-विशेष में नहीं है, **चण्डी** में ही है। इस प्रसङ्ग से पाठक को **साधना का बल** प्राप्त होगा। '**गीता**' के छठे अध्याय में अर्जुन ने यह पूछा है कि 'हे भगवन्! योग करते-करते विचलित होकर यदि साधक लक्ष्य-स्थान पर न पहुँच पाए, तो वह किस दशा को प्राप्त होता है? उभयथा भ्रष्ट होकर वह छिन्नाभ्र की तरह नष्ट तो नहीं हो जाता?' उत्तर में भगवान् कहते हैं—

'पार्थ! नैवेह नामुत्र, विनाशस्तस्य विद्यते। नहि कल्याण-कृत् कश्चिद्, दुर्गतिं तात! गच्छति॥'

अर्थात् 'हे अर्जुन! उसका यहाँ और वहाँ—दोनों ही जगह विनाश नहीं हो सकता क्योंकि कल्याण-कर्म करनेवाला दुर्गति को नहीं पाता।' सारांश यह है कि **पुण्य कर्म** विकृत नहीं होते और वे कर्त्ता का कोई अनिष्ट नहीं होने देते। लोक में भी यह उक्ति है कि '**पुण्य की जड़ सदा हरी**'। भगवान् ने **पुण्य** (कल्याण)-कर्त्ता पर अपना दबाव नहीं बतलाया है, न और ही किसी का। **शुभ-कर्म** शुभ-दायक ही होगा, ऐसा कहते हुए **श्रीकृष्ण** ने यह घोषित किया है कि **ईश्वरत्त्व** से भी **सुकृत कर्म** नष्ट नहीं हो सकता, **पुण्य कर्म** में भगवान् भी कुछ भी हेर-फेर नहीं कर सकते, यह तात्पर्य हुआ।

अब इधर देखिये, '**सप्तशती**' के '**वैकृतिक - रहस्य**', मन्त्र ३ में **महा-मुनि मार्कण्डेय** क्या कहते हैं—

'यो न पूजयते नित्यं, चण्डिकां भक्त-वत्सलाम्। भस्मी-कृत्यास्य पुण्यानि, निर्दहेत् परमेश्वरी॥'

अर्थात् जो भक्त-वत्सला **चण्डिका** को नहीं पूजता ('पूजयते' पद में ध्यान-पूजा-स्तोत्रादि सभी समझना चाहिए), उसके **पुण्य-कर्मों** को वह **परमेश्वरी** भस्म करके (पुण्य-कर्ता को) यावज्जीवन शोकाग्नि से जलाती रहती है अर्थात् वह शोक से तपता रहता है। पाठक दोनों की उत्कृष्टता पर विचार करते हुए देखें कि जहाँ **पुण्य-कर्म** पर कोई क्या, **विष्णु (कृष्ण) भगवान्** भी कुछ नहीं कर सकते, वहाँ वह **चण्डिका** उन्हीं पुण्य-कर्मों को भी भस्म कर देती है! यह **निग्रहानुग्रह-सामर्थ्य** है या नहीं?

उपासना-विषयक आगम-ग्रन्थों में ऐसे वाक्य कई जगह मिलते हैं कि '**मैं पाप को पुण्य और पुण्य को पाप बना देती हूँ।**' यथा—'**पापं पुण्यायते प्रीत्या, पुण्यं पापायते रुषा**' इत्यादि। स्तोत्रों में भी ऐसे वाक्य मिलते हैं। बताइए, इतना **सामर्थ्य** जिसमें मिले, वह और कौन देवता है? हमने तो ऐसा अपरिच्छिन्न **सामर्थ्य** कहीं नहीं देखा। पाठक भी यदि निर्मत्सर होकर देखेंगे, तो उन्हें यह बात सही मालूम पड़ेगी। यही नहीं, **श्रीकृष्ण** की **उपास्य** देवता **जगदम्बा** ही रही है, यह भी निर्णीत-प्राय है। देखिए—'**कृष्णेन संस्तुते देवि! शश्वद् भक्त्या त्वमम्बिके!**' स्पष्ट ही है। ऐसे ही **ब्रह्मा, शिवादि देव** भी इसका आराधन करते रहे हैं। जैसे—

'चतुर्भुजे चतुर्वक्त्र-संस्तुते परमेश्वरि, हिमाचल-सुता-नाथ-संस्तुते (पूजिते) परमेश्वरि!
इन्द्राणी-पति-सद्भाव-पूजिते परमेश्वरि, सुरासुर - शिरो-रत्न-निघृष्ट - चरणाम्बुजे!॥'

विशेषत: यह कहने में भी सङ्कोच नहीं होता है कि **हरि-हर, विरिञ्चि** आदि देवाधि-देव भी भगवती के माहात्म्य और प्रभावातिशयादि को परिपूर्णतया नहीं कह सके। '**शक्रादि-स्तुति**' में स्पष्ट कहा है—

'यस्या: प्रभावमतुलं भगवाननन्तो, ब्रह्मा हरश्च नहि वक्तुमलं बलं च।'

इस अवसर पर '**महाभारत**' के उस प्रसङ्ग का स्मरण कराना भी उपयोगी होगा कि '**भीष्म-पर्व**' के अन्तर्गत '**भगवद्-गीता**' पर्व में, **अर्जुन** को विजय प्राप्त करने के लिए दैवी सहायता पहुँचाने की इच्छा से **भगवान् श्रीकृष्ण** ने **दुर्गा** का ही आराधन बताया। वह स्तोत्र '**दुर्गा-स्तोत्र**' के नाम से अद्यावधि माना और पढ़ा जाता है। **अर्जुन** ने **कृष्णोपदेश** से उसे ग्रहण किया। उससे **दुर्गा का ध्यान** किया। भगवती प्रसन्न होकर प्रकट हुईं। **अर्जुन** को विजयी होने का वर दिया। यह **भगवान् श्रीकृष्ण** ने स्वयं निजी उपस्थिति में करवाया। वर लेकर **कृष्णार्जुन** रथ पर चढ़ '**सेनयोरुभयोर्मध्ये**' पहुँचते हैं। बस, वहीं से '**धर्म-क्षेत्रे कुरु-क्षेत्रे**' आदि **गीता का प्रारम्भ** होता है। यह प्रसङ्ग '**महाभारत**' के '**भीष्म-पर्व**' के २२वें और २३वें अध्याय में है तथा २४वें अध्याय में '**भगवद्-गीता**' प्रारम्भ होती है।

यहाँ यह विशेषता विचारणीय है कि **योगीश्वर कृष्ण** के द्वारा उपदेश पा **अर्जुन चण्डिका** का आराधन कर, विजय का वर ले, अपने को विजयी मान लेता है। विजयी मान लेने का प्रमाण है—'**लब्ध्वा वरं तु कौन्तेयो, मेने विजयमात्मना**' ('महाभारत', भीष्म-पर्व, २२वाँ अध्याय, दुर्गा-स्तोत्र)। इसके कुछ ही क्षण पीछे रथारूढ़ होकर वह '**सेनयोरुभयोर्मध्ये**' जा पहुँचता है। वहाँ अपने बन्धु-बान्धवों को और मामा, चाचा आदि स्व-जनों को सम्मुख देख **मोह** में आकर यह कह देता है कि—'**न चैतद् विद्मः कतरन्नो गरीयो, यद्वा जयेम यद्वा नो जयेयुः।**' अर्थात् 'यह समझ में नहीं आता है कि दोनों दलों में कौन बलवान् है ? हम उन्हें जीतेंगे कि वे हमें जीतेंगे !' पूर्व-दुर्गाराधन और वर-प्राप्ति के प्रसङ्ग को देखते हुए ऐसा **मोह** होना कहाँ तक सम्भव है, विज्ञ पाठक स्वयं विचार करें।

अर्जुन ऐसा ज्ञानी—नर का अवतार—नारायण का साथी ! फिर **भगवती** से दिव्य वाणी द्वारा वर प्राप्त हुआ। उसकी विजय सर्वथा निर्णीत हो गई। फिर भी **कृष्ण** से आकर यह कहना—

'कार्पण्य-दोषोपहत-स्वभावः, पृच्छामि त्वां धर्म-सम्मूढ - चेताः।
यच्छ्रेयः स्यान्निश्चितं ब्रूहि तन्मे, शिष्यस्तेऽहं शाधि मां त्वां प्रपन्नम्॥'

क्या यह प्रश्न **विजय-सिद्धि** का वर पा लेने पर भी उपयुक्त है ? हाँ, यदि पूर्व-प्राप्त **देवी-उपासना** का निर्णय न हो और केवल व्यावहारिक **मोह**, भगवद्-गीता के प्रारम्भ का प्रसङ्ग ही रखकर समझाना चाहें, तो हो सकता है, कोई साधारण आदमी की बात हो, तो। पर ऐसा नहीं है। उस प्रसङ्ग को छिपा नहीं सकते, न वह छिप ही सकता है क्योंकि अन्यान्य पुराणों से भी तो '**महाभारत**' समन्वय रखता है। '**महाभारत**' में ही अन्य-अन्य स्थल में भी ऐसा हुआ है। '**विराट् पर्व**' में **युधिष्ठिर**-सहित **अर्जुनादि** ने अज्ञात-वास में भी **दुर्गा का आराधन** किया है। संक्षेप में लिखते हैं—

युधिष्ठिरादि ने अज्ञात-वास स्वीकार कर प्रस्थान किया। **विराट्-नगर** की ओर चले। विचार आया कि 'अपने को सब राजा-महाराजा जानते हैं, कैसे छिपेंगे ? क्या होगा ? यदि प्रकट हो गए, तो फिर चौदह वर्ष वनवास भोगना पड़ेगा। बड़ा सङ्कट आया। इस सङ्कट से पार होने को किसकी शरण में जायँ, क्या करें ?' ऐसा विचारते हुए **युधिष्ठिर** के मन में **महा-माया श्रीजगदम्बा दुर्गा देवी का स्मरण** हुआ और उन्होंने **भगवती दुर्गा का आराधन** किया। उनका स्तोत्र **महाभारत** के '**विराट्-पर्व**' के छठे अध्याय में है। उससे प्रसन्न होकर **भगवती** ने **युधिष्ठिर** को विजय का वर दिया और साथ ही यह कहा कि—

मत्-प्रसादाच्च वः सर्वान्, विराट्-नगरे स्थितान्। न प्रज्ञास्यन्ति कुरवो, नरा वा तन्निवासिनः॥

अर्थात् 'हे युधिष्ठिर ! मेरी कृपा से विराट्-नगर में रहते हुए तुम सबको कोई भी कौरव और नगर-निवासी नहीं जान सकेंगे।'

कहिए, कैसा मोह किया ! उस **महाभारत-काल** में क्या **पाण्डव वीर** छिप सकते थे ? वह भी एक पड़ोसी राजा से ? राज-तेज तो विभूति रमाए से भी नहीं छिपता । फिर **युधिष्ठिर** जैसे धर्म-राज और **अर्जुन** तथा **भीम** जैसे महाबली-महापुरुषों का दुराव तो अति कठिन ही है, परन्तु भगवती का प्रभाव देखिए ! **राजा विराट्** क्या, वहाँ का कोई भी इन्हें पहचान नहीं सका ।

भगवती का ऐसा ही प्रभाव है । वह बड़े-बड़े ज्ञानियों को भी बलात् मोह में डाल देती है । **विराट् राजा** क्या चीज था ? देखा आपने ! बड़े-बड़े सङ्कटों पर बड़े-बड़े अवतारों ने, राजाओं ने ऋषियों ने, देवों ने—सबने **भगवती का आराधन** किया है । इसीलिए हम सबकी उपास्य देवता वही **भुवनेश्वरी पराम्बा** होनी चाहिए, क्योंकि वही निग्रहानुग्रह में समर्थ है ।

अद्भुत कार्य जो कभी न हो सकें, उन्हें भी यह कौतुक से कर डालती है । देखिए, **वसुदेव जी** के दो पत्नियाँ थीं—**रोहिणी** और **देवकी** । **रोहिणी** के कोई सन्तान न थी । **देवकी** के सन्तान होती थी और मर जाती थी (कंस द्वारा मार दी जाती थी)। एक समय **रोहिणी** ने भी **जगदम्बा दुर्गा** का आराधन किया (कहीं पुराणों में **गर्गाचार्य** से करवाया, ऐसा भी है)। बन्ध्या-योग से दुःखी **रोहिणी** को **भगवती** ने वर दिया, 'तुझे पुत्र दूँगी।' प्रतिज्ञानुसार ही **भगवती** ने **देवकी** के सातवें गर्भ को पाँचवें महीने में **देवकी** के गर्भ से खींचकर **रोहिणी** के गर्भ में स्थापित कर दिया । वही **बलराम** हुए । यह प्रमाण '**श्रीमद्-भागवत्**' में और '**देवी-भागवत**' में तथा अन्यान्य पुराणों में भी है । खींचने के कारण ही **बलराम जी** का नाम '**सङ्कर्षण**' पड़ा । विचार कीजिए, किसी देवता ने या वैज्ञानिक ने पाँच महीने के गर्भ को, सोती हुई गर्भिणी को बिना पीड़ा दिए, जीवित निकाल कर ले जाना, स्थानान्तर में **रोहिणी** के गर्भाशय में, बिना उसके मालूम किए बालक को प्रविष्ट कर देना, कितने आश्चर्य की बात है ! आश्चर्य की ही बात नहीं, सुतरां असम्भव है । फिर भी **इसे** सम्भव किया और वह पूर्ण गर्भ होकर, परिपुष्ट होकर महा-बली, महा-नीतिज्ञ सर्व-प्रकार कुशल निकले । क्या कहा जाय ! पाँच महीनों का गर्भ (डिम्भ) बाहर से भीतर कैसे प्रविष्ट कर दिया ? **रोहिणी** को मालूम नहीं, वेदना नहीं दुःख नहीं और वह जीवित कैसे रहा ! धन्य है जगदम्बा ! कर्तुमकर्तुमन्यथाकर्तुं समर्थ हो, इसमें सन्देह नहीं । आपकी लीला अपार है!

भगवती में सर्व-सामर्थ्य ऐसी है कि वह जो जो चाहे, सो कर सकती है । यहाँ एक तर्क और सम्मुख उपस्थित होता है कि **भगवती—माया** है और **ज्ञानी—माया-चक्र से पार** हो जाते हैं । यह अज्ञानियों को फँसाती है, ज्ञानियों को नहीं । इसका उत्तर सरल ही है । प्रथम तो ऊपर के उदाहरण ज्ञानियों के ही दिए हैं । उन्हें समझने से यह तर्क टिक नहीं सकता । भाई साहब ! ज्ञानी क्या, ज्ञान के केन्द्र-भूत **शिव-विष्णु** आदि देव भी जिसकी इच्छा के सहारे नृत्य करते हैं, उसके आगे **ज्ञानी** मनुष्य क्या कर सकेगा ? **ज्ञानी** तो इसकी शरण आकर, इसके प्रसाद से ही कुछ लाभ पाकर, इसके चक्र से पार हो, तो हो सकता है । '**शिवादीनपि कर्माणि कारयन्ती यदृच्छया**' अर्थात् यह **भगवती** तो अपनी इच्छानुसार शिवादि देवों से काम करवाती है, तो **ज्ञानी** क्या करेंगे ! वे सब इसके विधान में आने पर ही **ज्ञानी** भी हो सकेंगे ।

ज्ञान किसका, कौन करता है, जरा विचार-दृष्टि से देखिए । **प्रपञ्च** का ही **ज्ञान**—इसका ही निदान जानना है । **ब्रह्म** का 'ज्ञान' **ब्रह्म** को जानने का नहीं है । **ब्रह्म-भूत** हो जाने का **ज्ञान** है । वह **ज्ञान** इसका **ज्ञान** है । **ब्रह्म** कोई ज्ञेय वस्तु या तत्त्व नहीं है । भाई, **अद्वैत-ज्ञान** करना है तुम्हें ? **अद्वैत** किसका, किससे या किसमें करोगे ? आखिर **प्रकृति** का **पुरुष** से, या **पुरुष** में अथवा **माया** का **ब्रह्म** में ? तो यह **ज्ञान** तो इसी की अपेक्षा रखता है । बिना इसका आश्रय लिए आप **अद्वय-ज्ञान** पा ही नहीं सकते । इसलिए यह तर्क कुछ प्रतिष्ठा नहीं पा सकता । देखिए, जो **ज्ञानी** इसके उपासक होते हैं, उन्हें **ब्रह्मानुभव** यहीं हो जाता है । इसमें **शङ्कराचार्य** का पद्य प्रमाण है—'**पर-ब्रह्माभिख्यं रसयति रसं त्वद्-भजन-वान्**।' अर्थात् हे देवि ! आपके भजन

में निरत हुआ साधक (ज्ञानी) **पर-ब्रह्म** नाम के रस का आस्वाद करता रहता है। यही **अद्वैत-ज्ञान** देनेवाली है, यह भी समझिए—**विहायसि व्याप्तिरिवोष्णतानस्ते, भानौ प्रभेवेन्दु-गतेव चन्द्रिका।**
मातः ! सदा ब्रह्मणि संललन्ती, त्वमद्वयं बोधयसि स्व-योगिनः॥

अर्थात् आकाश में **व्याप्ति** और अग्नि में **उष्णता** तथा सूर्य में **प्रभा** एवं चन्द्र में **चाँदनी** की तरह आप **ब्रह्म** में विलास करती हुई अपने योगी (साधक) को **अद्वय-ज्ञान** का प्रबोध करा देती हैं। ठीक बात है कि यह **भगवती महा-माया** 'ब्रह्म-तेज' से सम्वलित अर्थात् उस पर खेलती हुई दीख पड़े, तो **अद्वैत** है। इन दो में **कोरे ब्रह्म** का 'ज्ञान' **अद्वैत** कहलाता है। क्या नहीं ? तो न जाने, उस नहीं-नहीं के कल्पना-जगत् में **वेदान्ती** कैसा क्या पा सकेंगे ! अस्तु, कोई कुछ भी करे। हमें तो यहीं सर्वानन्द **ब्रह्मानन्द** प्रतिभात होता है।

ब्रह्म-ज्ञान से भी इसका '**ज्ञान**' बहुत सरल और सुगम भी है। यह भी एक विशिष्ट उत्कर्ष ही है कि **भगवती** सर्व-कामना-प्रद होती हुई मोक्ष, निर्वाण, निःश्रेयस—सब देती है। अन्यत्र ऐसी बात नहीं। जहाँ देखो, जहाँ कुछ भी साधन भगवान् का फलित होने लगा, विरक्त हो गए, स्त्री-पुत्रों का त्याग किया, वे रो रहे हैं ! उपासक उन्हें उपेक्षा से देखता है या नहीं देखता। खाना नहीं खाता। उपवासादि-परायण होना पड़ता है। मतलब यह हुआ कि '**प्रवृत्ति**' के सभी पथ छोड़ने पड़ते हैं, तब कहीं '**निवृत्ति**' में प्रविष्ट होता है। फिर भी भगवान् की '**गीता**'-स्थित प्रतिज्ञा के अनुसार अनेक जन्मों में सिद्धि होते-होते ही परम गति को पाता है। इधर **भगवती** का सामर्थ्य हम क्या दिखाएँ ! वह एक प्रसिद्ध पद्य ही निर्णय कर देता है—

यत्रास्ति भोगो न च तत्र मोक्षः, यत्रास्ति मोक्षो न च तत्र भोगः।
श्रीसुन्दरी-तर्पण (पूजन) तत्पराणां, भोगश्च मोक्षश्च करस्थ एव॥

जन्म-जन्मान्तर की क्या बात ! एक ही जन्म में और दोनों बातें—**भोग भी, मोक्ष भी**—सानन्द पाता है। ऐसी **सर्वातिशय-सामर्थ्या अपरिच्छिन्न-कारुण्य-शालिनी मुण्ड-मालिनी जगदम्बा** को छोड़ और कौन **उपास्य** हो सकता है ? मैं तो कहता हूँ, मानव मात्र की **उपास्या** यही एक **भगवती** है, पर मानव भूल से अन्य-अन्य उपास्य देव के चक्कर में भटकते फिरते हैं ! विचार करके वे **भगवती** के माहात्म्य को पढ़ें-सुनें और मनन करें, तो निःसन्देह कहीं भटकना न पड़े।

भगवती ने कई **ज्ञानियों** के आचरण बदल दिए और **ज्ञानी**, जो '**गीता**' में भगवान् की आत्मा माना गया है—'**ज्ञानी त्वात्मैव मे मतम्**' अर्थात् वह भगवदात्म-तुल्य ही है, परन्तु '**सप्तशती**', प्रथम अध्याय के निम्न मन्त्र को देखो, यह क्या कहता है—

ज्ञानिनामपि चेतांसि, देवी भगवती हि सा। बलादाकृष्य मोहाय, महा-माया प्रयच्छति॥

अर्थात् वह **भगवती देवी महा-माया** 'ज्ञानियों' के भी चित्त को बलात् '**मोह**' में डाल देती है।

पाठक समझ गए होंगे। **भगवती** के सम्मुख **ज्ञानी-ध्यानी** की एक नहीं चलती। वह चाहे, तो बलात्—हठात् भी उसका **ज्ञान-ध्यान** बिगाड़ सकती है और बना सकती है। ऐसा **निग्रहानुग्रह-सामर्थ्य** केवल **भगवती** में ही है। इसी **महा-माया** के प्रभाव पर एक बार **नारद जी** भी **मोह** में पड़ गए थे। उन्होंने **विष्णु भगवान्** के सम्मुख कह दिया कि मैंने **माया** को जीत लिया है। तत्काल भगवान् ने उन्हें फटकारा कि "हे गीतज्ञ ! ऐसा नहीं कहना चाहिए। '**माया**' का पार तो हमने भी नहीं पाया है। देखना है तो आ, मैं बताऊँ।" यह कहकर **नारद** को कन्नौज देश में पहुँचा कर **माया** की वह लीला दिखाई कि क्या कहें ! फिर तो **नारद** को कभी '**माया**' को जीतने का साहस न हो सका। '**देवी-भागवत**' के छठें स्कन्ध में यह कथा विस्तार-पूर्वक वर्णित है।

इससे सिद्ध होता है कि **ज्ञानी, ध्यानी, तपस्वी**—कोई हो, **भगवती की कृपा** से ही पार जा सकता है। इससे विमुख हुए लोगों को इस **प्रपञ्च** से कभी छुटकारा नहीं मिलता—इसमें सन्देह नहीं।

सर्व-समर्थ को किसी के आश्रय की जरूरत नहीं रहती। यह भी एक बात देखने की है और मनन के योग्य है कि **ब्रह्मा, विष्णु, शिवादि** देव जब-जब दानवों द्वारा पीड़ित हुए हैं, दु:खी हुए हैं, तब परस्पर आपसी आश्रय करते रहे हैं। कभी तो सभी देव **शिव जी** के पास जाकर सहायता माँगते हैं, तो कभी **विष्णु** आदि देव **ब्रह्मा** के पास जाकर अपना दु:ख रोते हैं, तो कभी **ब्रह्मादि देव विष्णु** के पास जाकर गिड़गिड़ाते हैं। ऐसा वर्णन प्राय: सभी पुराणों में देख पड़ता है और यह भी सुनिश्चित देख पड़ता है कि ये **ब्रह्मा, विष्णु, महेश्वर** भी और समस्त **इन्द्रादि देव** भी **भगवती** के पास कई बार आश्रय पाने के लिए आए हैं, गिड़गिड़ाए हैं, किन्तु ऐसा स्थल पुराणों में नहीं आया, जहाँ **भगवती जगदम्बा भुवनेश्वरी मणि-द्वीपाधिवासिनी** (एवं **दश-महाविद्याओं** में से एक स्वरूप भी) किसी समय किसी दानवादि से क्षुब्ध होकर सहायता के लिए **ब्रह्मा, विष्णु** एवं **शिव** के पास गई हों, गिड़गिड़ाई हों।

उपनिषदों और **पुराणों** में भी अनेक स्थल ऐसे हैं, जहाँ ऊपर लिखी बात स्पष्ट है। '**केन उपनिषत्**' में इन्द्रादिकों का गर्व दूर करने को **भगवती** ने यक्ष-रूप धर कर परीक्षण किया। वही यक्ष '**उमा हैमावती**' होकर उपदेश करता है। भगवती से **इन्द्र** ने पूछा कि 'यह यक्ष कौन था ?' तब उसने अपने आपको **ब्रह्म** बतलाते हुए वही रूप रखा है अर्थात् उसी स्वरूप से अपने आपको **ब्रह्म** प्रदर्शित किया है। ऐसे ही '**श्वेताश्वतर उपनिषत्**' में देखिए। देवता ध्यान करते हैं, **भगवती** उन्हें दर्शन देती हैं—'**ध्यान-योगानुगता अपश्यन्, देवात्म-शक्तिं स्वगुणैर्निगूढाम्**' तथा '**इन्द्रो मायाभि पुरुरूप ईयते**' अर्थात् इन्द्र **माया** से ही वह रूप धारण करता है। '**मायां तु प्रकृतिं विधातृ**' इत्यादि और भी मन्त्र हैं। ये सभी प्रमाण वैदिक हैं।

अब **पुराणों** में देखिए। कोई पुराण ऐसा नहीं है, जहाँ थोड़ा-बहुत विस्तार से या संक्षेप से **भगवती** का चरित, कथा या माहात्म्य न मिलता हो। '**मार्कण्डेय पुराण**' की **सप्तशती** तो ज्वलन्त उदाहरण है। इससे तो **भारत-वासी** मात्र परिचित हैं। इसमें **ब्रह्मा, विष्णु** और **शिव** को ही **देवी** के तीनों चरितों का ऋषि अर्थात् ध्यान-कर्ता बतलाया है और जगह-जगह अर्थात् **महिषासुर-वध** के लिए तथा **शुम्भ-निशुम्भ-वध** के लिए **ब्रह्मा, विष्णु** आदि सभी **देव-कृत स्तुतियाँ** भी स्पष्ट हैं।

'**ब्रह्माण्ड-पुराण**' में '**ललितोपाख्यान**' नाम का एक खण्ड ही **भगवती** के वर्णन से भरा है। ४० अध्याय हैं। उसमें **श्रीत्रिपुरा-ललिता पराम्बा** का **भण्डासुर से युद्ध** है और **जगदम्बा** का देवों से कृत राज्याभिषेक है।

भागवत (**विष्णु-भागवत**) में **रुक्मिणी-हरण** के समय और **चीर-हरण** के समय **गोप-कन्याओं द्वारा चण्डिका-पूजन** तथा **गौरी-पूजन** है।

'**ब्रह्म-वैवर्त-पुराण**' में '**प्रकृति-खण्ड**' **दुर्गा-चरित** और **राधा-वर्णन** से रँगा हुआ है।

'**पद्म-पुराण**' में जहाँ-तहाँ **भगवती** के व्रतोपवासादि, कथा-महिमादि से बहुत अध्याय पवित्र हुए हैं।

'**शिव-पुराण**' में **पार्वती-चरित** परिपूर्णतया है। **सती-चरित** भी है। यह विशेषता है कि **भगवती** का चरित कई प्रकार से आया है।

'**गणेश-पुराण**' में **गणपति-जन्म** और गणपति के अग्र-पूज्य होने की कथा में **श्रीभगवती** का सुन्दर वर्णन है। इसमें २-४ स्थल पर **जगदम्बा** का सुन्दर चरित आया है।

'**देवी-भागवत**' तो **जगदम्बा** के चरितों से ही चमत्कृत है। क्या कहें, **भगवती की महिमा** धन्य है !

ऐसे ही **वराह, वामन, मत्स्यादि पुराणों** में जहाँ-तहाँ **भगवती के माहात्म्य** का वर्णन है, किन्तु किसी भी ग्रन्थ में ऐसा स्थल कहीं नहीं है, जहाँ **भगवती** ने किसी देव का आश्रय लिया हो। वैसे तो स्त्री-मात्र उसी की विभूतियाँ हैं—'**विद्याः समस्तास्तव देवि ! भेदाः, स्त्रियः समस्ताः सकला जगत्सु ।**'

इस मन्त्र के अनुसार इसकी विभूतियाँ **राधा, सीता, पार्वती, रमा** आदि—सभी अपने-अपने **पुरुष-देवों** के पास ही हैं, परन्तु **दुर्गा-रूप** से या **दश-महा-विद्या-रूप** से कोई **आद्या, तारा, भुवनेश्वरी, षोडशी, बगला, छिन्नमस्ता, भैरवी, मातङ्गी, धूमावती, कमलात्मिका** इन दशों में से कोई भी कहीं पुकारने गई हों, तो बताइए। कहते हैं, ऐसा स्थल हमें नहीं मिला। मिले कहाँ से ? है ही नहीं। इसको कहते हैं—'**सर्व-समर्थ देवता**'। इस प्रसङ्ग को पाठक आक्षेप न समझें। हमने तो इसे इसलिए दिया है कि **शक्ति** के उपासक भाइयों को हम यह सुझा दें कि आप सुदृढ़ और शुद्ध **सनातन मार्ग** पर चल रहे हैं, इसमें कोई संशय नहीं है। सीधा लक्ष्य-प्राप्ति का यही साधन है। **जगदम्बा** ही **भोग-मोक्ष**—दोनों देती हैं। यही हम सबकी **उपास्या** हैं।

यदि यह कहा जाय कि '**माया**' और '**ब्रह्म**' दोनों जगत् के कारण हैं—चाहे '**प्रकृति-पुरुष**' या '**शक्ति**' और '**शिव**' कुछ भी कह लीजिए, **परम पिता** और **जगन्माता** दो हैं, फिर एक '**माता**' का ही आश्रय क्यों बताया जाता है ?

इसका उत्तर बहुत सरलतया समझाया जा सकता है कि '**कारण**' दोनों हैं, तो भी एक '**प्रधान**' और एक '**सहकारी**' है। उनमें '**प्रधान**' कारण **माता** ही है। पुत्र को माँ के पेट से बाहर आते ही **माँ** का परिचय होता है। वह उसका दूध-भरा स्तन चूसने लगता है और उसकी गोद में रात-दिन पलता है, तो धीरे-धीरे उसे ही पूर्ण पहचानता है और वही उसका पालन-पोषण करती है। पिता को यह क्या पहचाने ? पिता क्या है, कौन है, यह उसको कुछ ख्याल नहीं; न वह इसके लिए रुचि ही रखता है। पिता की उसे आवश्यकता ही नहीं पड़ती ! और पिता का ज्ञान भी उसे कराती है, तो '**माता**' ही कराती है। जगत् में कहावत भी प्रसिद्ध है—'**माँ बतावे वही बाप। शिशु न जाने अपने आप।**' इस व्यवहार को परम प्रमाण मानकर समझिए कि '**माता**' क्या और कैसा '**कारण**' है ?

पिता स्वयं भी उसे अपने आपको '**कारण**' नहीं समझा सकता, न कह सकता है। वह तो यह कहता है, देखिए भगवद्-गीता—'**नाहं प्रकाशः सर्वस्य, योग-माया-समावृतः।**

अर्थात् भगवान् कृष्ण स्वयं कहते हैं कि 'भाई अर्जुन, मैं सबका स्वयं-प्रकाश भी नहीं हो सकता। मैं तो **योग-माया** से समावृत रहता हूँ' अर्थात् '**माया-सम्वलित** होने के कारण मैं **परं-ब्रह्म-तत्त्व** या सबके प्रकाश में नहीं आ सकता।' इस प्रमाण को देखते हुए विचार कीजिए—**प्रथमोपास्या** देवता **भगवती** सिद्ध होती हैं कि नहीं ? यदि हाँ, तो क्यों ये लोग अज्ञान-वश बिना **माँ का उपदेश** पाए पिता की तलाश में भटक रहे हैं ? हमें तो इन लोगों पर बहुत दया आती है कि इनके प्रति विशेष प्रयत्न करें, जिससे इनका दिन सीधा हो और ये सब **जगन्माता चण्डिका** की सेवा में निरत रहकर **ब्रह्म-ज्ञान-प्राप्ति** में सुविधा पाएँ, पर क्या करें ? ये लोग भी कुछ विचार-दृष्टि से काम लें और पक्षपात को छोड़ें, तो कुछ करना सम्भव है।

अन्यथा, **शङ्कराचार्य** की यही सूक्ति सिद्ध समझनी पड़ती है—

अतस्त्वामाराध्यां हरि-हर-विरिञ्च्यादिभिरपि, प्रणन्तुं स्तोतुं वा कथमकृत-पुण्यः प्रभवति।

अर्थात् हे जगदम्ब ! ब्रह्मा, विष्णु, शिवादि देवों की भी आराधनीया आपको पुण्यवान् जन ही प्रणाम और स्तुति करने को समर्थ होते हैं। अन्य नहीं। पुण्यात्मा ही इधर झुकता है, बाकी नहीं।

ये अज्ञानी कहते हैं कि **माता** जगत् का मुख्य कारण है, तो पिता (पुरुष) कौन-सा कारण रहा ? इसके उत्तर में '**ब्रह्म-सूत्र**' (वेदान्त-सिद्ध ग्रन्थ) में भगवान् शङ्कराचार्य ने **ब्रह्म** को जगत् का अभिन्न निमित्तोपादान कारण माना है। साक्षात् कारण नहीं माना है और पञ्चमी श्रुति के द्वारा **ब्रह्म** का प्रकृतित्त्व-साधन भी किया है, जिसका अर्थ यह होता है कि **प्रकृति** को इस प्रकरण में **ब्रह्म** बताया है अन्यथा '**यतो न इमानि भूतानि जायन्ते**'—इस श्रुति में पञ्चमी विभक्ति के अर्थ में आए हुए 'तस्' प्रत्यय का समन्वय ठीक नहीं बैठता। विशेष क्या कहें, **वेदान्त-ग्रन्थों** में ही क्या, सभी **पुराणों** में ऐसा ही समन्वय किया है कि **माया** और **ब्रह्म** का **अद्वैत** समझा जाय।

जगत् का कारण बताते हुए **वेदान्त-ग्रन्थ** तो यही कहते हैं कि '**शक्ति प्रकृति माया**' ही प्रपञ्च की सृष्टि करती है। इस **महा-माया** की एक शक्ति-विशेष है, जिसके दो भेद हैं—(१) **आवरण-शक्ति** और (२) **विक्षेप-शक्ति**। इन दोनों में पहली '**विक्षेप-शक्ति**' ही जगत् की रचना करती है। लिखा है—'**विक्षेप-शक्तिर्भूतादि-ब्रह्माण्डान्तं जगत् सृजेत्**' अर्थात् **विक्षेप-शक्ति** ही भूतादि ब्रह्माण्ड-पर्यन्त **जगत्** बनाती है। इससे पाठक समझ गए होंगे कि **शक्ति** ही जगत् का कारण है और **उपास्या** है। हम यदि जगत् को जानना चाहते हैं और इससे पार होना चाहते हैं, तो इस जगत् की **कर्त्री-धर्त्री** का अनुनय-विनय कर इसके प्रसाद से ही **जगत् का रहस्य और कठिनाइयाँ** सुगमता से समझ सकते हैं।

किसी इञ्जन या मशीन के पुर्जों की क्रिया सीखना-समझना है, तो उसके बनानेवाले इञ्जीनियर से मिलिए। वह प्रसन्न होकर जो सिखाएगा, वैसा ज्ञान किसी दूसरे से नहीं पा सकते। ठीक इसी प्रकार इस '**माया**' के चक्र को अर्थात् **प्रपञ्च** को समझना है, तो इसकी बनानेवाली और सञ्चालन करनेवाली '**प्रकृति**' शक्ति **महा-माया जगदम्बा** को प्रसन्न करना होगा। इसका आराधन किसी भी प्रकार करना प्रथम कर्त्तव्य है। इस तरह जगत् के मानव मात्र का ध्येय (उपास्य) **भगवती** ही होनी चाहिए।

भगवती ही जगत् का कारण है। यही नहीं, यह **ईश्वर** और **जीव** का भी कारण है। देखिए, '**तत्त्व-विमर्शिनी**'-**कार** क्या कहते हैं। **वेदान्त** के इस प्रमाण को खूब समझिए—'**मायाख्यायाः कामधेनोर्वत्सौ जीवेश्वरावुभौ**' अर्थात् '**माया**' नाम की काम-धेनु के दो बछड़े हैं—**जीव** और **ईश्वर**। अब आपको **ईश्वर** और **जीव** का कारण **भगवती** ही दीखने लगी कि नहीं ?

अब हम आपको यह भी समझाते हैं कि **भगवती चण्डिका** जगत् के कारणों का भी कारण है, किन्तु इसका कोई कारण नहीं है। देखिए, **सांख्य-दर्शन**, जो आद्य दर्शन कहलाता है, क्या कहता है—'**प्रकृतेर्महान् ततोऽहङ्कारस्तस्माद् गणश्च षोडशकः**' अर्थात् **मूल-प्रकृति** से **महत्-तत्त्व** हुआ, **महत्-तत्त्व** से **अहङ्कार**, **अहङ्कार** से **सोलह गण** हुए हैं। **मन** सहित **११ इन्द्रियाँ** और **पञ्च-महाभूत**—ये **सोलह गण** हैं। इस क्रम से मालूम हो जाना चाहिए कि इन **सोलह** और '**महत्**' तथा '**अहङ्कार**' से जगत् बनता है। इनकी कारण **मूल प्रकृति महा-माया** ही है, तो समस्या हल हो गई कि नहीं ?

ऊपर कहे हुए दार्शनिक विकास-वाद को आगम ग्रन्थों (सप्तशती-रहस्य) में निम्न प्रकार प्रतिपादित किया है—'**सर्वस्याद्या महा-लक्ष्मीस्त्रिगुणा, परमेश्वरी लक्ष्याऽलक्ष्य-स्वरूपा सा।**' इससे भी वही **शक्ति** सबकी आद्या है, **उपास्या** है, ऐसा स्पष्ट हो जाता है।

यही '**माया शक्ति**' परमात्मा है। परमात्मा कोई भिन्न रूप नहीं है। इस '**महा-माया**' की एक झलक किसी अचिन्त्य उपाधि से '**पुरुष**'-संज्ञा को प्राप्त होती है। **चेतना** इसकी झलक है, द्युति है, प्रभा है। कुछ भी कहिए, वही **पुरुष** में प्रधान होती है—'**त्वं चेतनाऽसि पुरुषे, पवने बलं त्वम्**' इत्यादि। '**पुरि शेते इति पुरुषः**'—'पुरि' अर्थात् 'पुर' के समान सीमा में (एक वृत्त में) सोनेवाला—व्याप्त रहनेवाला '**पुरुष**' कहलाता है। इसकी

प्रभा परिधिवाली होकर जिस **चैतन्यांश** को घेरे रहती है, वही '**पुरुष**' होता है । जब तक इस तरह का **अद्वैत-ज्ञान** न होगा, तब तक मुक्त नहीं हो सकते । यदि **ब्रह्म** को इससे भिन्न माना और इस **महा-माया भगवती** को ब्रह्म से भिन्न माना, तो कुछ नहीं मिलेगा । चक्र में पड़े अरहट की घड़ियों की तरह घूमा करोगे, इसमें सन्देह नहीं।

अब यदि यह कहो कि **ब्रह्म** पहले और पीछे **माया** हुई, फिर भले ही एक हो गए हैं, तो यह भी एक भारी भूल है । मैं कहता हूँ, आप लोग इस पहले-पीछे के चक्र में भी न पड़िए । यह पहले-पीछे का चक्र बहुत बुरा है । इसे छूने से यह उसी तरह दूषित कर देता है, जैसे कीचड़ में फँसे को निकालनेवाला कीचड़ में सन ही जाता है । इसके वश हुआ साधक ऊपर-नीचे, आगे-पीछे, आदि-अन्त और बड़े-छोटेपन के भ्रम में ज्ञान-ध्यान भूलकर न इधर का रहता है, न उधर का ! इसलिए शास्त्र पर विश्वास कीजिए । **आगम-निगम** जिस बात को समझाते हैं, उसी पर स्थिर श्रद्धा रखिए । इनका **अद्वैत** इस प्रकार मानिए, जैसा **भगवान् वेदव्यास** जी ने समझाया है—'**एवं युवतयः सद्यः पुरुषत्वं प्रपेदिरे । चक्षुष्मन्तोऽनुपश्यन्ति नेतरेऽत्तद्विदो जनाः ॥**'

इस प्रकार **स्त्रियाँ** ही **पुरुषत्व** को प्राप्त हुई हैं, पर भाई, इस बात को आँखवाले ही जानते हैं (देखते हैं)। उसको न समझनेवाले नहीं जानते । यहाँ चक्षु से चर्म-चक्षु का ग्रहण नहीं है, **ज्ञान-चक्षु** का ही ग्रहण है । इस बात को **ज्ञानी** ही जान सकता है कि **स्त्रियाँ** ही **पुरुष** बनती हैं । **अज्ञानी** इस तथ्य को नहीं पहचानते । यहाँ '**एवं**' शब्द ऊपर बताए हुए प्रकार का **बोधक** है । '**प्राधानिक रहस्य**' में पहले '**सर्वस्याद्या महा-लक्ष्मी**' से आरम्भ करते हुए मन्त्र २४ तक **महा-काली, महा-लक्ष्मी, महा-सरस्वती** और उनसे एक-एक **मिथुन** को बताया है । उनमें **ब्रह्मा, विष्णु, शिव** देवों को **स्त्रियों** से ही (शक्ति-रूपों से ही) प्रकट किया है । आगे ब्रह्माण्ड की रचना इनके द्वारा बताई है । इस क्रम से भी **महा-माया महा-लक्ष्मी** जगत् का मूल कारण निर्णीत होती हैं और **माया**—**ब्रह्म** का या **प्रकृति**—**पुरुष** का पहले-पीछे का शास्त्रार्थ निवृत्त हो जाता है ।

अब तो पाठकों की समझ में यह आ गया होगा कि '**माया**' - शब्द से वाच्य **प्रकृति, शक्ति, चण्डिका** देवी में और '**ब्रह्म**'-पद से वाच्य **पुरुष, परमात्मा, परमेश्वर** से कुछ भी अन्तर नहीं है । देखिए, **भगवती जगदम्बा**—'**देवी गीता**' में **हिमालय** को क्या तत्त्वोपदेश करती हैं ? ध्यान से पढ़िए और खूब समझिए—'**देवी-भागवत**', स्क० ७, अ० ३१, देवी-गीता, अ० २—

अहमेवास पूर्वं तु, नान्यत् किञ्चिन्नगाधिप ! तदात्म-रूपं चित्-सम्वित्, पर-ब्रह्मैक-नामकम् ॥१
अप्रतर्क्यमनिर्देश्यमनौपम्यमनामयम् । तस्य काचित् स्वतः सिद्धा, शक्तिः मायेति विश्रुता ॥२
न सती सा नाऽसती सा, नोभयात्मा विरोधतः । एतद्-विलक्षणा काचिद्, वस्तु-भूताऽस्ति सर्वदा ॥३
पावकस्योष्णते वेयमुष्णांशोरिव दीधितिः । चन्द्रस्य चन्द्रिके वेयं, ममेयं सहजा ध्रुवा ॥४
तस्यां कर्माणि जीवानां, जीवाः कालाश्च सञ्चरे । अभेदेन विलीनाः स्युः, सुषुप्तौ व्यवहार-वत् ॥५

अन्त में एक बात और कहकर पाठकों से क्षमा चाहेंगे । यह '**चण्डी**' महा-माया—'**माया-सबल-ब्रह्म**' कहलाती है । इसकी सत्ता में ब्रह्मा, विष्णु, शिव '**माया-सबल-ब्रह्म**' के प्रतीक हैं और इनके अवतार राम, कृष्ण, नृसिंह, वराहादि भी '**माया-सबल**' ब्रह्म ही कहलाते हैं । वे अंश हैं, पूर्वोक्त ब्रह्मादि-देव प्रतीक हैं, यह भेद समझिए । इस बात को विशेषतया ध्यान में रखकर विचार करोगे, तो देव - मात्र में क्या, प्राणी-मात्र में आपको **भगवती जगदम्बा चण्डिका** के दृश्य दीखने लगेंगे । ज्यों-ज्यों यह भाव व्यापक होता जायगा, वैसी ही **उपासना** प्रबल होती जायगी और **अद्वैत-दर्शन** प्राप्त होगा—भेद मिट जायगा । इसलिए इसकी **उपासना** को स्वीकृत कीजिए, किसी योग्य साधक से परामर्श कर **दीक्षा** ग्रहण कीजिए । फिर जो आनन्द आपको प्राप्त होगा, वह अवर्णनीय होगा । संसार दुस्तर नहीं दीख पड़ेगा । सब कठिनाइयाँ सुगम होंगी । ■■

श्रीचण्डी-चालीसा एवं श्रीचण्डी-अष्टक

* 'कवि-पुष्कर शास्त्री' श्रीपण्डित जगन्नारायण देव शर्मा

❋

श्रीगुरु के पद-पद्म का, करके संयत ध्यान। चण्डी के गुण-कथन में, दें मुझको वर-दान॥

जय-जय-जय श्री चण्डी माता ! कर प्रणाम, तेरे गुण गाता।
जय-जय-जय, श्री चण्डी देवी ! कौन नहीं है तेरा सेवी॥१
जय चण्डी मेरी तू अम्बा ! तू ही कहलाती जगदम्बा।
जय चण्डी, जो तुझको ध्याता, मुँह माँगा वर है वह पाता॥२
जय-जय सदा प्रशंसित चण्डी। महामोद-महिमा से मण्डित।
जय-जय कर दुष्टों को दण्डित, कर दे उनके गुरुडम खण्डित॥३
जय-जय चारों युग निस्तारिणि ! शिष्ट जनों की कृति-विस्तारिणि !
जय-जय, विविध रूप-त्रय धारिणि—महा-महिम्ना, मङ्गल-कारिणि॥४
जय-जय, सदाचार-आराध्या, सब प्रकार सेवक-संराध्या।
जय-जय, बाधाओं की हरणी ! सब प्रकार तू जग-दुख - हरणी॥५
जयति, धराधर की तू कन्या—सभी भाँति धरती पर धन्या।
जयति, निराश्रित तेरी माया—भाव-भूषिता तेरी काया॥६
तेरी बड़ी अनोखी रेखा—नहीं किसी ने आँखों देखा !
तेरी महिमा अद्‌भुत न्यारी—तू सबकी जननी है प्यारी॥७
युगानु-रूप रूप तू धरती—सभी भाँति, सबको वश करती।
सभी देवियों की महरानी, सभी जगह तेरी रजधानी॥८
काली-रूप धार जब लेती, तब अरि को भय से भर देती।
अट्टहास कर रण में जाती, निर्भय होती तेरी छाती॥९
लक्ष्मी-रूप धार जब लेती, सर्व-सम्पदा है भर देती।
सरस्वती - वपु जब दरसाती, तब विद्या दे सुख सरसाती॥१०
सृष्टि-स्थिति-लय करनेवाली, हो स्वाधीन विचरनेवाली।
अपनी महिमा तू ही जाने, नहीं किसी को भारी माने॥११
जय श्रीविन्ध्याचली भवानी, त्रिपुर-सुन्दरी सुधी सयानी।
जय श्री सत्य-तत्त्व की दात्री, आशातीत प्रेम की पात्री॥१२

जय-जय, आदि-शक्ति विख्याता, निगमागम-वर्णित विज्ञाता ।
जय-जय, तू गुण-गौरव-खानी, तेरे यश गा थकती बानी ॥१३
तू ही उमा-रमा-ब्रह्माणी, काव्य-कोश - संयुत कल्याणी ।
तू तपेश्वरी—तप की सरणी, सब प्रकार संशय-भय-हरणी ॥१४
सकल सुरासुर तेरे सेवी, तू सबकी आराध्या देवी ।
दीन - आर्त जन को अपनाती—दया-दृष्टि उन पै दरसाती ॥१५
सभी ठौर तेरी प्रभुताई—सभी ठौर, तेरी चतुराई !
तू सबकी ही करे भलाई—तुझे न भाती कभी बुराई ॥१६
तुही कहाती भरणी - भद्रा—तुही चलाती निद्रा - तन्द्रा ।
कहाँ नहीं तेरी है सत्ता—कहाँ नहीं तेरी जय-मत्ता ? ॥१७
तू सदैव है विचरण - शीला—तू सदैव ही विवरण-लीला ।
स्वाहा-स्वधा सभी में रमती—सभी कहीं दृढ़ता से जमती ॥१८
सूर्य-देव में तुही प्रभा है—चन्द्र-देव में तुही विभा है ।
तुही अयोध्या—तू ही काशी, सभी कहीं तेरी प्रतिमासी ॥१९
करे सिंह पर तू असवारी, जो कि भयङ्कर होता भारी ।
त्रि-विध अग्नि की ज्वाला है तू—औ त्रिवर्ग की शास्ता है तू ॥२०
मद्य-पान जब तू करती है, नहीं काल से तू डरती है ।
युद्ध-स्थल में शौर्य दिखाती—सर्वोपरि है नाम लिखाती ॥२१
चौंसठ योगिनियाँ हैं तेरी—करतीं नहीं तनिक भी देरी ।
रक्त शत्रुओं का हैं पीतीं, अति प्रचण्ड होकर हैं जीतीं ॥२२
उड़ती तेरी विजय-पताका, अङ्कित हो जय-युक्त शलाका ।
दानव-दल हैं मारे जाते—जो कि प्रहार सामने आते ॥२३
तूने की है पूर्व प्रतिज्ञा—कोई कैसे करे अवज्ञा !
दुष्ट-नाश-हित तू अवतरती—क्लेश-हीन सज्जन को करती ॥२४
दिव्य देव - गण तुझे मनाते—अपने सङ्कट-विकट बताते ।
दानव-दल पर क्रोध दिखाती—उन्हें हताहत - वृत्ति सिखाती ॥२५
तेरे आराधक जो अति दृढ़ होते—अपना समय नहीं हैं खोते ।
करती तू उन सबकी रक्षा—देती उन्हें साधना - शिक्षा ॥२६
जब सोलह सिङ्गार सजाती—सुर-रमणी भी निरख लजाती ।
तेरे पद पर माथ लगाती—औ अपना सौभाग्य बढ़ाती ॥२७

तेरे अगणित हीरे-मोती, नहीं चमकते लख तन-जोती ।
तुही एक छविवाली होती, सब पर पड़ी धूल की धोती ॥२८
तू अभयङ्कर की अति प्यारी ! तू प्रलयङ्कर की अति प्यारी ।
तू शिव-शङ्कर की अति प्यारी, तू जय-शङ्कर की अति प्यारी ॥२९
तू है समुदित तेज - तपस्या, तू है एकी जटिल समस्या ।
तू है कारण अमित रहस्या, तू रहती है सदा अनश्या ॥३०
चार-आठ-सोलह कर-धारिणि, शत-सहस्र-अगणित-भुज-सारिणि ।
अस्त्र-शस्त्र सबमें परि-पारिणि, अवसर पा समस्त अधिकारिणि ॥३१
तुझमें व्यापक बुद्धि अनूठी, तुझमें शाश्वत शुद्धि अनूठी ।
तुझमें आठो सिद्धि अनूठी, तुझमें नव निधि ऋद्धि अनूठी ॥३२
जो करते हैं 'मानस-पूजा', उनको काज नहीं फिर दूजा ।
उनके भीतर बढ़ती ऊर्जा, दब जाती अभ्यासित भूर्जा ॥३३
फूल सुगन्धित तुझको भाते, लोग हार गुँथ कर पहनाते ।
तू प्रसन्न-मन हो मुसकाती, और कृपा उन पर दरसाती ॥३४
तू ममता की मूर्ति अकेली, तू समता की स्फूर्ति अकेली ।
तू क्षमता की शक्ति अकेली, तू गुरुता की भक्ति अकेली ॥३५
काम-धेनु होकर वर देती, कल्प-लता हो घर भर देती ।
भुक्ति-मुक्ति देती तू अम्बा, सभी पूजकों की अवलम्बा ॥३६
मधु-कैटभ उपजे बल-शाली, जिनने सारी भू मथ डाली ।
तूने उन्हें युक्ति रच मारा, बेचारों का चला न चारा ॥३७
महिषासुर से सुर-गण हारे, सङ्कट तूने ही तब टारे ।
मदोन्मत्त हो जब ललकारा, तुमने उसे दौड़कर मारा ॥३८
शुम्भ-निशुम्भ रहे दो भाई, जिनसे सब जनता घबराई ।
उनका बध कर आगे आई, तू शान्ति पुनः पनपाई ॥३९
श्रीचण्डी - चालीसा न्यारा, पढ़े-सुने पातक - हर प्यारा ।
'कवि-पुष्कर' द्वारा निरमाया, माँ रखती जिस पर है छाया ॥४०

*

नियम-सहित नित जो करें, इसका सुन्दर पाठ ।
आशु-तोष भगवान दें, कहीं सिद्धियाँ आठ ॥

***

श्रीचण्डी - अष्टक

श्री चण्डी के चरित जहाँ हैं प्रिय जन गाते, वहाँ नहीं यम-दूत, कष्ट देने हित जाते ।
महिमा-मण्डित मूर्ति, मोहिनी है यह अम्बा, गरिमा-मण्डित स्फूर्ति, सोहिनी है जगदम्बा ॥
जो होते दृढ़ भक्त, उन्हीं को है अपनाती—उनसे उत्तम कार्य, प्रेरणा दे करवाती ।
उसके पथ के पथिक, सँभल कर हैं पग धरते, और नहीं वे विघ्न देख, किञ्चित् हैं डरते ॥
देवी करती सदा प्यार से, दुख से रक्षा, करती निर्भय उन्हें, अलौकिक देकर शिक्षा ।
वे भावुक भी—नहीं कष्ट औरों को देते, विजयी बनकर धन्यवाद—सबसे हैं लेते ॥
दोनों ही 'नव-रात्रि' अर्चना माँ की होती । कलश-स्थापन-सहित, जलाई जाती जोती ।
'सप्त-शती' का पाठ करें—नियमित सुख-दायी, जो होते हैं—शक्ति-साधना के अनुयायी ॥
धूप-दीप-नैवेद्य, सुगन्धित माल्य चढ़ाते । जपते उसका 'मन्त्र, तन्त्र' सम्मोद बढ़ाते ।
सिंह-वाहिनी जब प्रसन्न हो जाय भवानी, तब सहाय नित करे सर्वदा सिद्ध सयानी ॥
वेद-पुराण प्रसिद्ध—इष्ट हो जाती देवी । और बनाती दया-दृष्टि से निज पद-सेवी ।
फिर आपत्ति-विपत्ति—एक क्षण में हर लेती। सारी सिद्धि-समृद्धि, दान दे घर भर देती ॥
पञ्च-मुखी 'रुद्राक्ष'—कण्ठ में अपने धारे, दुष्ट दस्यु को अस्त्र-शस्त्र के द्वारा मारे ।
'चमत्कार' लख—नमस्कार सब जन करते हैं, वे पाते सुख-शान्ति—मोद मन में भरते हैं ॥
कोविद कवि इसलिए—उसी का आश्रय पाके, करते रचना रुचिर—बनें जनता में बाँके ।
शरणागत हो—धर्म-नीति उससे पा लेता, 'कवि-पुष्कर' प्रिय सदा—पद्म-पद उसके सेता ॥

'चण्डी - चालीसा' पढ़ें, पहले हिय हरषाय ।
फिर 'चण्डी - अष्टक' पढ़ें, प्रेम - पूर्ण सरसाय ॥

जयति जयति 'श्रीदुर्गा'-नाम

सब प्रकार के कल्याणों का है निधान 'श्रीदुर्गा'-नाम ।
और सभी विध हर्ष सुखों का है विधान 'श्रीदुर्गा'-नाम ॥१॥ जयति०
सभी समृद्ध सम्पदाओं का एक हेतु 'श्रीदुर्गा'-नाम ।
दुःख-सागर से तरने का है एक सेतु 'श्रीदुर्गा'-नाम ॥२॥ जयति०
भव की भीति मिटा देने का एक मूल है 'दुर्गा'-नाम ।
रोग-दैत्य-विद्रावण के हित शिव-त्रिशूल है 'दुर्गा'-नाम ॥३॥ जयति०
निर्बल में बल भरनेवाला एक मन्त्र है 'दुर्गा'-नाम ।
ओज-तेज-उत्साह-वृद्धि का एक तन्त्र है 'दुर्गा'-नाम ॥४॥ जयति०
ज्ञान और विज्ञान-लाभ का सत् कारण है 'दुर्गा'-नाम ।
श्रीहरि सकल दुरित दोषों का परिहारण है 'दुर्गा'-नाम ॥
जयति जयति 'श्रीदुर्गा'-नाम ॥५॥ जयति०

श्रीमहा-विद्या-स्तोत्र

* पण्डित कृष्णानन्द जी मिश्र 'वैद्य' की कृपा से प्राप्त

सङ्कल्प : ॐ तत्सत् अद्यैतस्य ब्रह्मणोऽह्नि द्वितीय-प्रहरार्द्धे श्वेत-वराह-कल्पे जम्बू-द्वीपे भरत-खण्डे आर्यावर्त्त-देशे अमुक-पुण्य-क्षेत्रे कलियुगे कलि-प्रथम-चरणे अमुक-सम्वत्सरे अमुक-मासे अमुक-पक्षे अमुक-तिथौ अमुक-वासरे अमुक-गोत्रोत्पन्नो अमुक-नाम त्रिविध-दोषोपशमनार्थं सकलारिष्ट-ग्रह-जन्म-दुःख-ध्वंसन-पूर्वकं भूत-प्रेत-पिशाच-राक्षस-ब्रह्म-राक्षस-वेताल तथा कुल-देवतायाः शान्त्यर्थं कष्ट-निवारणार्थं ज्वराधि-जन्य-दुःख-व्याधि-कृमि-ध्वंसन-पूर्वकं महा-शान्ति-कामः श्रीमहा-विद्यायाः सकल-रसानुकूल महा-शान्तिक-नाम-स्तोत्र-पाठमहं करिष्ये। तेनैव स्तोत्रेण दश-दिन-पर्यन्तं अहो-रात्र हवनमहं करिष्ये। ॐ नमो भगवते महा-विद्यायै नमः।

विनियोग : ॐ अस्य श्रीमहा-विद्या-मन्त्रस्य श्रीअघोरार्यमा ऋषिः। गायत्री-त्रिष्टुप्-जगती-छन्दांसि। परमात्मा श्रीकालिका देवता। श्रीमहा-माहेश्वरी विद्या। माया बीजं। त्रि-शक्ति-त्रिमुद्रा शक्तिः। श्रीमहा-विद्या-प्रीत्यर्थे (मम सकल-दुरित-क्षयार्थे, सकल-जन-वश्यार्थे, सकल - कार्य - सिद्ध्यर्थे, मोहनार्थे, मनोऽर्पित-कामना-सिद्ध्यर्थे, सकल-फल-प्राप्त्यर्थे, प्राप्त-संरक्षणार्थे, शीघ्र-सकल-कामना-सिद्ध्यर्थे, सर्वाशा - परिपूरणार्थे, धन-धान्यान्न-वस्त्रालङ्कारादि-समृद्ध्यर्थे) जपे पाठे विनियोगः।

ऋष्यादि-न्यास : श्रीअघोरार्यमा-ऋषये नमः शिरसि। गायत्री-त्रिष्टुप्-जगती-छन्दोभ्यः नमः मुखे। परमात्मा श्री कालिका-देवतायै नमः हृदि। श्री महा-माहेश्वरी-विद्यायै नमः कण्ठे। माया-बीजाय नमः लिङ्गे। त्रि-शक्ति-त्रि-मुद्रा-शक्तये नमः नाभौ। श्रीमहा-विद्या-प्रीत्यर्थे जपे पाठे विनियोगाय नमः अञ्जलौ।

कर-न्यास : ॐ अंगुष्ठाभ्यां नमः। ऐं तर्जनीभ्यां नमः। ह्रीं मध्यमाभ्यां नमः। श्रीं अनामिकाभ्यां नमः। क्लीं कनिष्ठिकाभ्यां नमः। महा-विद्यायै स्वाहा करतल-कर-पृष्ठाभ्यां नमः।

अङ्ग-न्यास : ॐ हृदयाय नमः। ऐं शिरसे स्वाहा। ह्रीं शिखायै वषट्। श्रीं कवचयोः हुम्। क्लीं नेत्र-त्रयाय वौषट्। महा-विद्यायै स्वाहा अस्त्राय फट्।

उत्कीलन-मन्त्र–ॐ ऐं ह्रीं वाग्-वादिनी सर्व-मन्त्राणां सर्व-यन्त्राणामुत्कीलन-करी सर्व-सुख-मुखन-करी स्वाहा।

ध्यान : पञ्च-वक्त्रां च लम्बोष्ठीं, नयन-त्रय-शोभिताम्।
रक्त-दंष्ट्रां करालास्यां, कृष्णाजिन्मृग-रूपिणीम्।।
रक्त-वस्त्रां दश-भुजामायुधैः परि-शोभिताम्।
खड्गं च मुशलं शूलं, भल्लं वाणं च दक्षिणे।।
धनुः पाशं च डमरुं, शक्तिं खेटं तथोत्तरे।
विभ्राणां सिंह-पृष्ठस्थां, ध्याये तां हृत्-शिरोरुहे।।
आरुणीं वारुणीं चैव, सर्वोपद्रव - नाशिनीम्।
उल्का-मुखीं रुद्र-जटीं, नाग-पृष्ठ-शिरोधरीम्।।

भगवती महा-विद्या के पाँच मुख हैं। प्रत्येक मुख में तीन नेत्र हैं और ओष्ठ लम्बे हैं। रक्त-वर्ण की दाढ़ें हैं, जिनसे मुख भयानक हैं। काले मृग-जैसा स्वरूप है। रक्त-वस्त्र धारण किए हैं। दस भुजाएँ हैं, जिनमें से दाहिने पाँच हाथों में–१.खड्ग, २.मुशल, ३.शूल, ४.भाला और ५.वाण लिए हैं। बाँएँ पाँच हाथों में – १.धनुष, २.पाश, ३.डमरु, ४.शक्ति और ५.खेटक शोभायमान हैं। इस प्रकार की महा-विद्या देवी सिंह की पीठ पर आसीन हैं। इनका ध्यान हृदय-कमल पर करना चाहिए। ये उल्का के समान प्रदीप्त मुखोंवाली हैं। रुद्र-जटा-धारिणी हैं और इनके शिर पर नाग-पृष्ठ है। ये सभी उपद्रवों का नाश करनेवाली आरुणी-वारुणी हैं।

पूजा-मन्त्र : **ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं कुल-कुण्ड-स्वामिनि! स्वाहा। ॐ आत्म-रक्षां कुरु-कुरु, पर-विद्यां छिन्धि-छिन्धि, पर-यन्त्रं स्फोटय-स्फोटय, ॐ कुण्ड-स्वामिनि! स्वाहा।**

मूल-मन्त्र : ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं महा-विद्यायै स्वाहा।

उक्त **'मूल-मन्त्र'** का १०८ जप करने के बाद **'माला-मन्त्र'** का जप करना चाहिए–

माला-मन्त्र : **ॐ ह्रौं हंसक्ष-मल्वय-वरा हंसक्ष-मल्वय-वरीं श्रीं श्रीं ह्रीं याचकः सर्वाराध्य सर्व-शुद्धनार्थं सर्व-गुरु स्वयं गुरु-नाथ हंसक्ष-मल्वय सं हंसक्ष-मल्वपरि हंसक्ष-मल्वय-परां श्रीशम्भु गुरु श्रीं ह्रीं हसौं ऐं क्लीं सोऽहं सौं श्रीं ह्रीं मूलादि-ब्रह्म-रन्ध्रान्तं विष-तनीयसीमुद्यदादित्य-रुचिरां स्मरेत् शुभ-शान्तये।**

ॐ महा-विद्यां प्रवक्ष्यामि, महा-देवेन निर्मिताम्। चिन्तितां किन्त-रूपेण, मात्रा हृदय-नन्दिनीम्।।
उत्तमां सर्व-विद्यां, सर्व-भूत-वश-करीम्। सर्व-पाप-क्षय-करीं, सर्व-शत्रु-निवारिणीम्।।

होम-मन्त्र : **ॐ ह्रां हंसः कुल - कार्य - करीं, कुल-करीं, गोत्र-करीं, पुत्र-करीं, पुष्टि-करीं, तुष्टि करीं, धन-करीं, धान्य-करीं, वृद्धि - करीं, उत्साह - बल - वर्धिनीं, भूतानां प्रभञ्जिनीं, शोषिणीं, मोहिनीं, द्राविणीं, दुष्ट-यन्त्र-प्रभञ्जिनीं, पुत्र-पौत्रादि-वर्धिनीं, आयुरारोग्यैश्वर्याभिवर्धिनीं, सर्व-भूत-स्तम्भिनीं, सर्वाकर्षिणीं, सर्व-लोक-वश-करीं, सर्व-**

जन-वश-करीं, सर्व-यन्त्र-प्रमोदिनीं, एकाहिकं, द्व्याहिकं, त्र्याहिकं, चातुर्थिकं, पञ्चाहिकं, षष्ठ्याहिकं, सप्ताहिकं, अष्टाहिकं, अर्ध - मासिकं, षाण्मासिकं, साम्वत्सारिकं, वातिकं, पैत्तिकं, श्लेष्मिकं, सान्निपातिकं, कुष्ठ-रोग-जठर-रोग-मुख-रोग-प्रमेह-रोग-शुक्र - विशि-भयं विस्फोटकादि-विनाशनाय स्वाहा। ॐ वेतालादि - ज्वर, मुहूर्त - ज्वर, दिवस-ज्वर, रात्री-ज्वर, सन्ध्या-ज्वर, सन्तत-ज्वर, राक्षस-ज्वर, अग्नि-ज्वर, प्रस्वेद-ज्वर, विषम-ज्वर, तीव्र-ज्वर, माया-प्रयोगाभिचारिक-ज्वर, दृष्टि-ज्वर, पाण्डु-ज्वर, अस्मादादि-ज्वर-प्रयोगाद्धि विनाशनाय स्वाहा। ॐ ब्रह्माण्ड-शूल, शिर-शूल, शिरोऽर्ध-शूल, अक्षि-शूल, घ्राण-शूल, कर्ण-शूल, दन्त-शूल, गल-शूल, गण्ड-शूल, हृदय-शूल, कुक्षि-शूल, पृष्ठ-शूल, कटि-शूल, नाभि-शूल, उदर-शूल, हस्त-शूल, उरू-शूल, पाद-शूल, पादार्ध-शूल, सर्व-शूल-विनाशनाय स्वाहा।

ॐ सर्व-व्याधि-विनाशनाय स्वाहा, सर्व-शत्रु-विनाशनाय स्वाहा। सर्व-विस्फोटक-विनाशनाय स्वाहा। ॐ आत्म-रक्षा, परमात्म-रक्षा, मित्र-रक्षा, अग्नि-रक्षा, प्रत्यग्नि-रक्षा, पराग्नि-वातो-रक्षा, चौर-रक्षा—तेषां सकलं बध्नामि नमः स्वाहा। ॐ हर-देहिनीं नमः स्वाहा। ॐ इन्द्र-देहिनीं नमः स्वाहा। ॐ स्व-स्व-ब्रह्माण्ड-दण्डं विश्रामय, विश्रामय, विष्णु-दण्डम्। ॐ ज्वर-ज्वर, ईश्वर-कुमार-दण्डम्, ॐ प्रहर-प्रहरानु-दण्डम्, हिलि-मिलि माया-दण्डम्। नित्यं-नित्यं विश्रामय। विश्राम-वारुणी, शूलिनी, गारुड़ी रक्ष रक्ष स्वाहा।

ॐ नदीनां पुलिने जाता, पर्वते वा वनान्तरे। रुद्रस्य हृदये जाता, विद्याऽहं काम - रूपिणी स्वाहा। ॐ ज्वल ज्वल देहस्य देहेन सकल-लोह-पिङ्गली-कठिन-प्रेरिका, किलि, किलि, किलिकं महा - दण्डं कुमार - दण्डं, नृत्य नृत्य विष्णु - वन्दितां, हंसिनीं, शङ्खिनीं, चक्रिणीं, गदिनीं, शूलिनीं रक्ष रक्ष स्वाहा।

ॐ ह्रां स्वाहा, ॐ ह्रां ह्रां स्वाहा। ॐ ह्रीं स्वाहा, ॐ ह्रीं ह्रीं स्वाहा। ॐ ह्रूं स्वाहा, ॐ ह्रूं ह्रूं स्वाहा। ॐ ह्रें स्वाहा, ॐ ह्रें ह्रें स्वाहा। ॐ ह्रैं स्वाहा, ॐ ह्रैं ह्रैं स्वाहा। ॐ ह्रों स्वाहा, ॐ ह्रों ह्रों स्वाहा। ॐ ह्रौं स्वाहा, ॐ ह्रौं ह्रौं स्वाहा। ॐ ह्रं स्वाहा, ॐ ह्रं ह्रं स्वाहा। ॐ ह्रः स्वाहा, ॐ ह्रः ह्रः स्वाहा।

ॐ क्रां स्वाहा, ॐ क्रां क्रां स्वाहा। ॐ क्रीं स्वाहा, ॐ क्रीं क्रीं स्वाहा। ॐ क्रूं स्वाहा, ॐ क्रूं क्रूं स्वाहा। ॐ क्रें स्वाहा, ॐ क्रें क्रें स्वाहा। ॐ क्रैं स्वाहा, ॐ क्रैं क्रैं स्वाहा। ॐ क्रों स्वाहा, ॐ क्रों क्रों स्वाहा, ॐ क्रौं स्वाहा, ॐ क्रौं क्रौं स्वाहा। ॐ क्रं स्वाहा, ॐ क्रं क्रं स्वाहा। ॐ क्रः स्वाहा, ॐ क्रः क्रः स्वाहा।

ॐ कं स्वाहा, ॐ कं कं स्वाहा। ॐ खं स्वाहा, ॐ खं खं स्वाहा। ॐ गं स्वाहा, ॐ गं गं स्वाहा। ॐ घं स्वाहा, ॐ घं घं स्वाहा। ॐ ङं स्वाहा, ॐ ङं ङं स्वाहा। ॐ चं स्वाहा, ॐ चं चं स्वाहा। ॐ छं स्वाहा, ॐ छं छं स्वाहा। ॐ जं स्वाहा, ॐ जं जं स्वाहा। ॐ झं स्वाहा, ॐ झं झं स्वाहा। ॐ ञं स्वाहा, ॐ ञं ञं स्वाहा।

ॐ टं स्वाहा, ॐ टं टं स्वाहा। ॐ ठं स्वाहा, ॐ ठं ठं स्वाहा। ॐ डं स्वाहा, ॐ डं डं स्वाहा। ॐ ढं स्वाहा, ॐ ढं ढं स्वाहा। ॐ णं स्वाहा, ॐ णं णं स्वाहा। ॐ तं स्वाहा, ॐ तं तं स्वाहा। ॐ थं स्वाहा, ॐ थं थं स्वाहा। ॐ दं स्वाहा, ॐ दं दं स्वाहा। ॐ धं स्वाहा, ॐ धं धं स्वाहा। ॐ नं स्वाहा, ॐ नं नं स्वाहा।

ॐ पं स्वाहा, ॐ पं पं स्वाहा। ॐ फं स्वाहा, ॐ फं फं स्वाहा। ॐ बं स्वाहा, ॐ बं बं स्वाहा। ॐ भं स्वाहा, ॐ भं भं स्वाहा। ॐ मं स्वाहा, ॐ मं मं स्वाहा। ॐ यं स्वाहा, ॐ यं यं स्वाहा। ॐ रं स्वाहा, ॐ रं रं स्वाहा। ॐ लं स्वाहा, ॐ लं लं स्वाहा। ॐ वं स्वाहा, ॐ वं वं स्वाहा।

ॐ शं स्वाहा, ॐ शं शं स्वाहा। ॐ षं स्वाहा, ॐ षं षं स्वाहा। ॐ सं स्वाहा, ॐ सं सं स्वाहा। ॐ हं स्वाहा, ॐ हं हं स्वाहा। ॐ क्षं स्वाहा, ॐ क्षं क्षं स्वाहा। ॐ त्रं स्वाहा, ॐ त्रं त्रं स्वाहा। ॐ ज्ञं स्वाहा, ॐ ज्ञं ज्ञं स्वाहा।

ॐ नमो भगवते रुद्राय नमः। ॐ भूः स्वाहा, ॐ भुवः स्वाहा। ॐ स्वः स्वाहा, ॐ भूर्भुवः स्वः स्वाहा।

ॐ ब्रह्मणे नमः स्वाहा। ॐ विष्णवे नमः स्वाहा। ॐ रुं रुद्राय नमः स्वाहा। ॐ रुद्रादित्याय नमः स्वाहा। ॐ नमो भगवते रुद्राय सर्व-भूतानां सर्व-विषाणां सर्व-दुष्टानां निग्रहं कुरु-कुरु स्वाहा। ॐ आदित्याय नमः स्वाहा। ॐ सोमाय नमः स्वाहा।। ॐ अङ्गारकाय नमः स्वाहा। ॐ बुधाय नमः स्वाहा। ॐ वृहस्पतये नमः स्वाहा। ॐ शुक्राय नमः स्वाहा।। ॐ शनैश्चराय नमः स्वाहा। ॐ राहवे नमः स्वाहा। ॐ केतवे नमः स्वाहा।

ॐ श्लेषाय नमः स्वाहा।। ॐ दुर्गे महा-शान्तिक-पतङ्ग-भूत-प्रेत-पिशाच-राक्षस-ब्रह्म-राक्षस-सर्व-वेताल-सर्व-वृश्चिक-भय-विनाशनाय स्वाहा। ॐ नमो भगवते रुद्राय स्वाहा। ॐ हां हीं हूं हें हैं हों हौं हं हः हूं फट् स्वाहा। ॐ क्रां क्रीं क्रूं क्रें क्रैं क्रों क्रौं क्रं क्रः स्वाहा। ॐ शिं शिवाय नमः स्वाहा।

ॐ सूं सूर्याय नमः स्वाहा। ॐ सों सोमाय नमः स्वाहा। ॐ मं मङ्गलाय नमः स्वाहा। ॐ बुं बुधाय नमः स्वाहा। ॐ वृं वृहस्पतये नमः स्वाहा। ॐ शुं शुक्राय नमः स्वाहा। ॐ शं शनैश्चराय नमः स्वाहा। ॐ रां राहवे नमः स्वाहा। ॐ कें केतवे नमः स्वाहा।

ॐ महा-शान्तिक-भूत-प्रेत-पिशाच-राक्षस-ब्रह्म-राक्षस - सर्व-वेताल-सर्व-वृश्चिक-भय-विनाशनाय स्वाहा।

ॐ नमो भगवते रुद्राय स्वाहा। ॐ नमो भैरवाय स्वाहा। ॐ नमो गणेशाय स्वाहा। ॐ नमो दुर्गायै स्वाहा। ॐ सिं सिंह-शार्दूल-गजेन्द्र-ग्रह-सर्व-व्याघ्रादि मृगादि-बध्नामि नमः स्वाहा।

ॐ बां बाहुं बध्नामि नमः स्वाहा। ॐ नें नेत्रं बध्नामि नमः स्वाहा। ॐ श्रों श्रोत्रं बध्नामि नमः स्वाहा। ॐ पां पादं बध्नामि नमः स्वाहा। ॐ आं आंसां बध्नामि नमः स्वाहा। ॐ सं सर्वं नमः स्वाहा। ॐ बं बन्धनं कुरु कुरु स्वाहा।

ॐ शत-योजन-विस्तीर्णं रुद्रो वदति मण्डलम्। तद् बन्धनं कुरु कुरु स्वाहा। ॐ नमो भगवते रुद्राय स्वाहा। ॐ नमो भैरवाय स्वाहा। ॐ नमो गणेश्वराय स्वाहा। ॐ नमो दुर्गायै स्वाहा। ॐ भूत-पिशाचान्, असुर-ग्रहान्, डाकिनी-ग्रहान्, अपस्मार-ग्रहान्, कामलक-ग्रहान्, भूत-ग्रहान्, प्रेत-ग्रहान्, कस्मल-ग्रहान्, अति-विश्वास-ग्रहान् नाशय नाशय स्वाहा।

ॐ ग्लां ग्लीं ग्लूं ग्लें ग्लैं ग्लों ग्लौं ग्लं ग्लः गणपतये स्वाहा। ॐ क्षां क्षीं क्षूं क्षें क्षैं क्षों क्षौं क्षं क्षः क्षेत्र-पालाय स्वाहा। ॐ स्त्रां स्त्रीं स्त्रूं स्त्रें स्त्रैं स्त्रों स्त्रौं स्त्रं स्त्रः सूर्याय स्वाहा। ॐ गं गन्धर्वाय स्वाहा। ॐ यं यक्षाय स्वाहा। ॐ ह्रीं तक्षक-आस्तीक-कर्कोटक-द्रावलिक-शङ्ख-पद्मक-कुलिक-महा-शङ्ख-चूड़-वासुकि-नाग-कुले श्रीं श्रीं ल्वौं ह्रौं ह्रूं फट् स्वाहा। ॐ ऐं ह्रीं हनुमते राम-दूताय लङ्का-विध्वंसनाय अञ्जनी-गर्भ-सम्भूताय त्रीन्-त्रिंशत्-शाकिनी-शाय-शाकिनी-डाकिनी-यक्षिणी-विध्वंसनाय भूत-प्रेत-पिशाच-मर्दनाय, किलि किलि, वुवुकारेण विभीषणे, रक्षेशाय, ह्रीं श्रीं ग्लौं ह्रौं हूं फट् स्वाहा। ॐ नमो हनुमते महा-बल-पराक्रमाय, मम परस्य च चतुर्वर्ण-भूत-प्रेत-पिशाच-शाकिनी-डाकिनी-यक्षिणी-पूतना-मारिका-महा-मारी-कृत्या-यक्ष-राक्षस-भैरवी, वेताल-ग्रह-ब्रह्म-ग्रह-राक्षस-आदित्यान् कुवा वीक्षणेन हन हन, जृम्भय जृम्भय, निराशय निराशय, वारय वारय, बन्धय बन्धय, नुद नुद, धुन धुन, मां रक्ष रक्ष, महा-माहेश्वर, रुद्रावताराय हां हां हां, घें घें घें, हूं फट् स्वाहा।

ॐ ऐं श्रीं ह्रां ह्रीं ह्रूं स्फ्रें, हसौं हस्फ्रें हसों द्रों ॐ हनुमते मम क्षय-कुष्ठ-गण्ड-माला-स्फोटक-क्षत-ज्वर-एकाहिकं-द्व्याहिकं-त्र्याहिकं-चातुर्थिकं-सम्भव-ज्वर-सन्निपातिक-ज्वर-भूत-ज्वर-मन्त्र-ज्वर-शूल-भगन्दर-मूत्र-कृच्छ्र-कपाल-कर्ण-शूल-अक्षि-शूल - उदर-शूल-हस्त-शूल-पाद-शूलार्दित-सर्वान् व्याधीन् क्षणेन भिन्धि भिन्धि, छिन्धि छिन्धि, नाशय नाशय, निष्कृन्तय निष्कृन्तय, छेदय छेदय, भेदय भेदय, वीर हनुमान्! ह्रां ह्रां ह्रूं ह्रूं घें घें ह्रीं ह्रीं ह्रूं ह्रूं फट् स्वाहा।

ॐ ऐं ह्रीं क्रां क्रौं सुग्रीवाय वानर-राजाधिराजाय किलि वुवु-कारेण, हिलि हिलि, मिलि मिलि, शाकिनी-डाकिनी-यक्षिणी-भूत-प्रेत-पिशाचान् प्रणाशय प्रणाशय, सुग्रीव वीर! छिन्धि छिन्धि, भिन्धि भिन्धि, सिन्धि सिन्धि, त्रोटय त्रोटय, त्राटय त्राटय, सर्व-ग्रहान् हन हन, पच पच, आम्रय आम्रय। ॐ ऐं ह्रीं ह्रीं क्रीं हों भूं स्भूं हूं हूं फट् स्वाहा।

ॐ ऐं ह्रीं क्लीं ऐं सकलेश्वरि, सुरासुर-वन्दिते, श्रीत्रिपुरे! ऐं ह्रों क्रूं क्रूं हूं फट् स्वाहा। ॐ रक्त-चामुण्डे, नर-कपाले उल्कोपरि परिवारे श्मशान-प्रिये! सर्व-सकल-भक्ष-रुधिर-मांस-भोजन-प्रिये! सिद्धि-विद्याधर-वन्दित-चरणे! असुरासुर-गण-सेविते! दहन-पुरन्दरे! विष्णु - स्तुते! विश्वेश्वरि, पूजिते, त्रैलोक्यादि-आधार-मूले! विश्व-जननि, आनन्द-स्वरूपिणि, विश्व - सृष्टि-स्वरूपे, महा-विद्ये ! भैरव - रूपिणि, स्वर्ग-मृत्यु-पाताल-विनाशिनि, कल्पे, रुद्र-कुक्षि, विनिर्गत - शरीरे, षोडश-कला-परिपूर्णे, दानव-स्वरूपेण दश-दिशि इन्द्र-उच्छिन्दे! ऐं ह्रीं अस्मिन् मण्डले प्रवेशय प्रवेशय, शत्रु-मुखं स्तम्भय स्तम्भय, अन्य भूतं भक्षय भक्षय, अरि-सैन्यं विध्वंसय विध्वंसय, ब्रह्म-राक्षसान् उत्सादय उत्सादय, पर-विद्यां निवारय निवारय, कुयन्त्रं भञ्जय भञ्जय, ज्वरं नाशय नाशय, विषं निर्विषं कुरु कुरु, पर - सङ्कटं दह दह, पच पच, मथ मथ, मर्दय मर्दय, सर्व-दुष्ट-जनं भक्षय भक्षय, मम मनोरथान् पूरय पूरय, अतीतानां गत - वार्त्तां वर्तमानं कथय कथय, ऐं ह्रीं छिन्धि छिन्धि, भिन्धि भिन्धि, सिन्धि सिन्धि, त्रोटय त्रोटय, सर्व-ग्रहान् शक्ति-शत्रून् भस्मी कुरु कुरु, इन्द्र-वज्रेण, ब्रह्म-पातेन, बन्ध बन्ध, रुद्र-शालेन छेदय छेदय, ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं ह्रों ह्रौं क्रों क्रौं ग्लौं स्वौं श्रीं हूं फट् स्वाहा।

ॐ हरिभ्यां नमः स्वाहा। ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रें ह्रैं ह्रों ह्रौं ह्रं ह्रः हूं फट् स्वाहा। ॐ क्रां क्रीं क्रूं क्रें क्रैं क्रों क्रौं क्रं क्रः स्वाहा। ॐ नमो भगवते रुद्राय स्वाहा। ॐ नमो भैरवाय स्वाहा। ॐ नमो गणेश्वराय स्वाहा। ॐ नमो दुर्गायै स्वाहा। ॐ गन्धाय नमः स्वाहा। ॐ गन्ध - पादाय नमः स्वाहा। ॐ पञ्चोत्तर-शत-कोटि-सहस्र-गजान् बन्ध बन्ध, शान्तिं कुरु कुरु, भूत-प्रेत-पिशाच-शाकिनी-डाकिनी-यक्षिणी-कूष्माण्ड-वासिनी चातुर्थिक-चौर-राजा-दुष्ट-पुरुषादीन् तेषां दिशां बध्नामि, पातालं बध्नामि, अन्तरिक्षं बध्नामि, घ्राणं बध्नामि, भ्रू बध्नामि, श्रोत्रं बध्नामि, मुखं बध्नामि, वाचं बध्नामि, जिह्वां बध्नामि, शब्दं बध्नामि, हृदयं बध्नामि, पञ्चाशत्-कोटि-सहस्रानन्त-योजन-विस्तीर्णो रुद्रो वदति मण्डलं। तस्य श्रीरुद्र - मण्डलं बन्ध बन्ध, रक्ष रक्ष, माचल माचल, माक्रम्य माक्रम्य स्वाहा।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रें ह्रैं ह्रों ह्रौं ह्रं ह्रः हूं फट् स्वाहा। ॐ क्रां क्रीं क्रूं क्रें क्रैं क्रों क्रौं क्रं क्रः स्वाहा। ॐ नमो भगवते रुद्राय स्वाहा। ॐ नमो भैरवाय स्वाहा। ॐ नमो गणेश्वराय स्वाहा। ॐ नमो दुर्गायै स्वाहा।

ॐ ऐन्द्र-दिशायां ऐरावतारूढं वज्र-हस्तं परिवार-सहितं, दिग्-देवाधि-पतिमैन्द्र-मण्डलं बध्नामि स्वाहा। इन्द्र-मण्डलं बन्ध बन्ध, रक्ष रक्ष, माचल माचल, माक्रम्य माक्रम्य स्वाहा। ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रें ह्रैं ह्रों ह्रौं ह्रं ह्रः हूं फट् स्वाहा। ॐ क्रां क्रीं क्रूं क्रें क्रैं क्रों क्रौं क्रं क्रः स्वाहा। ॐ नमो भगवते रुद्राय स्वाहा। ॐ नमो भैरवाय स्वाहा। ॐ नमो गणेश्वराय स्वाहा। ॐ नमो दुर्गायै स्वाहा।

ॐ अग्नि-दिशायां अजारूढं शक्ति-सहितं परिवार-सहितं दिग्-देवाधिपते अग्नि-मण्डलं बध्नामि नमः स्वाहा। ॐ अग्नि-मण्डलं बन्ध बन्ध, रक्ष रक्ष, माचल माचल, माक्रम्य माक्रम्य स्वाहा। ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रें ह्रैं ह्रों ह्रौं ह्रं ह्रः हूं फट् स्वाहा। ॐ क्रां क्रीं क्रूं क्रें क्रैं क्रों क्रौं क्रं क्रः स्वाहा। ॐ नमो भगवते रुद्राय स्वाहा। ॐ नमो भैरवाय स्वाहा। ॐ नमो गणेश्वराय स्वाहा। ॐ नमो दुर्गायै स्वाहा।

ॐ दक्षिण-दिशायां महिषारूढं दण्ड-हस्तं परिवार-सहितं दिग्-देवाधि-पतिं निर्ऋति-मण्डलं बध्नामि नमः स्वाहा। ॐ निर्ऋति-मण्डलं बन्ध बन्ध, रक्ष रक्ष, माचल माचल, माक्रम्य माक्रम्य स्वाहा। ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रें ह्रैं ह्रों ह्रौं ह्रं ह्रः हूं फट् स्वाहा। ॐ क्रां क्रीं क्रूं क्रें क्रैं क्रों क्रौं क्रं क्रः स्वाहा। ॐ नमो भगवते रुद्राय स्वाहा। ॐ नमो भैरवाय स्वाहा। ॐ नमो गणेश्वराय स्वाहा। ॐ नमो दुर्गायै स्वाहा।

ॐ नैऋत्य-दिशायां प्रेतारूढं खड्ग-हस्तं परिवार-सहितं दिग्-देवाधि-पतिं निऋति-मण्डलं बध्नामि नमः स्वाहा। ॐ निऋति-मण्डलं बन्ध बन्ध, रक्ष रक्ष, माचल माचल, माक्रम्य माक्रम्य स्वाहा। ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रें ह्रैं ह्रों ह्रौं ह्रं ह्रः हूं फट् स्वाहा। ॐ क्रां क्रीं क्रूं क्रें क्रैं क्रों क्रौं क्रं क्रः स्वाहा। ॐ नमो भगवते रुद्राय स्वाहा। ॐ नमो भैरवाय स्वाहा। ॐ नमो गणेश्वराय स्वाहा। ॐ नमो दुर्गायै स्वाहा।

ॐ पश्चिम-दिशायां मन्त्रारूढं पाश-हस्तं परिवार-सहितं दिग्-देवाधि-पतिं वरुण-मण्डलं बध्नामि नमः स्वाहा। ॐ वरुण-मण्डलं बन्ध बन्ध, रक्ष रक्ष, माचल माचल, माक्रम्य माक्रम्य स्वाहा। ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रें ह्रैं ह्रों ह्रौं ह्रं ह्रः हूं फट् स्वाहा। ॐ क्रां क्रीं क्रूं क्रें क्रैं क्रों क्रौं क्रं क्रः स्वाहा। ॐ नमो भगवते रुद्राय स्वाहा। ॐ नमो भैरवाय स्वाहा। ॐ नमो गणेश्वराय स्वाहा। ॐ नमो दुर्गायै स्वाहा।

ॐ वायु-दिशायां मृगारूढं धनुर्हस्तं परिवार-सहितं दिग्-देवाधि-पतिं वायु-मण्डलं बध्नामि नमः स्वाहा। ॐ वायु-मण्डलं बन्ध बन्ध, रक्ष रक्ष, माचल माचल, माक्रम्य माक्रम्य स्वाहा। ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रें ह्रैं ह्रों ह्रौं ह्रं ह्रः हूं फट् स्वाहा। ॐ क्रां क्रीं क्रूं क्रें क्रैं क्रों क्रौं क्रं क्रः स्वाहा। ॐ नमो भगवते रुद्राय स्वाहा। ॐ नमो भैरवाय स्वाहा। ॐ नमो गणेश्वराय स्वाहा। ॐ नमो दुर्गायै स्वाहा।

ॐ उत्तर-दिशायां नरारूढं गदा-हस्तं परिवार-सहितं दिग्-देवाधि-पतिं कुबेर-मण्डलं बन्ध बन्ध, रक्ष रक्ष, माचल माचल, माक्रम्य माक्रम्य स्वाहा। ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रें ह्रैं ह्रों ह्रौं ह्रं ह्रः ह्रूं फट् स्वाहा। ॐ क्रां क्रीं क्रूं क्रें क्रैं क्रों क्रौं क्रं क्रः स्वाहा। ॐ नमो भगवते रुद्राय स्वाहा। ॐ नमो भैरवाय स्वाहा। ॐ नमो गणेश्वराय स्वाहा। ॐ नमो दुर्गायै स्वाहा।

ॐ ईशान-दिशायां वृषभारूढं त्रिशूल-हस्तं परिवार-सहितं दिग्-देवाधि-पतिं ईशान-मण्डलं बध्नामि नमः स्वाहा। ॐ ईशान-मण्डलं बन्ध बन्ध, रक्ष रक्ष, माचल माचल, माक्रम्य माक्रम्य स्वाहा। ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रें ह्रैं ह्रों ह्रौं ह्रं ह्रः ह्रूं फट् स्वाहा। ॐ क्रां क्रीं क्रूं क्रें क्रैं क्रों क्रौं क्रं क्रः स्वाहा। ॐ नमो भगवते रुद्राय स्वाहा। ॐ नमो भैरवाय स्वाहा। ॐ नमो गणेश्वराय स्वाहा। ॐ नमो दुर्गायै स्वाहा।

ॐ अन्तरिक्ष-दिशायां लोष्ठ-नागारूढं शूल - हस्तं परिवार-सहितं दिग्-देवाधि-पतिं कालाग्नि-रुद्र-मण्डलं बध्नामि नमः स्वाहा। ॐ कालाग्नि-रुद्र-मण्डलं बन्ध बन्ध, रक्ष रक्ष, माचल माचल, माक्रम्य माक्रम्य स्वाहा। ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रें ह्रैं ह्रों ह्रौं ह्रं ह्रः ह्रूं फट् स्वाहा। ॐ क्रां क्रीं क्रूं क्रें क्रैं क्रों क्रौं क्रं क्रः स्वाहा। ॐ नमो भगवते रुद्राय स्वाहा। ॐ नमो भैरवाय स्वाहा। ॐ नमो गणेश्वराय स्वाहा। ॐ नमो दुर्गायै स्वाहा।

ॐ विष्णु-दिशायां गरुडारूढं शङ्ख-चक्र-गदा-पद्म-हस्तं परिवार-सहितं, दिग् - देवाधि-पतिं विष्णु - मण्डलं बध्नामि नमः स्वाहा। विष्णु-मण्डलं बन्ध बन्ध, रक्ष रक्ष, माचल माचल, माक्रम्य माक्रम्य स्वाहा। ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रें ह्रैं ह्रों ह्रौं ह्रं ह्रः ह्रूं फट् स्वाहा। ॐ क्रां क्रीं क्रूं क्रें क्रैं क्रों क्रौं क्रं क्रः स्वाहा। ॐ नमो भगवते रुद्राय स्वाहा। ॐ नमो भैरवाय स्वाहा। ॐ नमो गणेश्वराय स्वाहा। ॐ नमो दुर्गायै स्वाहा।

ॐ ब्रह्मणो-दिशायां हंसारूढं ब्रह्मास्त्र-हस्तं परिवार-सहितं दिग्-देवाधि-पतिं ब्रह्म-मण्डलं बध्नामि नमः स्वाहा। ॐ ब्रह्म- मण्डलं बन्ध बन्ध, रक्ष रक्ष, माचल माचल, माक्रम्य माक्रम्य स्वाहा। ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रें ह्रैं ह्रों ह्रौं ह्रं ह्रः ह्रूं फट् स्वाहा। ॐ क्रां क्रीं क्रूं क्रें क्रैं क्रों क्रौं क्रं क्रः स्वाहा। ॐ नमो भगवते रुद्राय स्वाहा। ॐ नमो भैरवाय स्वाहा। ॐ नमो गणेश्वराय स्वाहा। ॐ नमो दुर्गायै स्वाहा।

ॐ अधो-दिशायां क्रूनारूढं लोष्ठ-भागं क्रूं-परिवार-सहितं दिग्-देवाधि-पतिं पाताल-मण्डलं बध्नामि नमः स्वाहा। ॐ पाताल-मण्डलं बन्ध बन्ध, रक्ष रक्ष, माचल माचल, माक्रम्य माक्रम्य स्वाहा। ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रें ह्रैं ह्रों ह्रौं ह्रं ह्रः ह्रूं फट् स्वाहा। ॐ क्रां क्रीं क्रूं क्रें क्रैं क्रों क्रौं क्रं क्रः स्वाहा। ॐ नमो भगवते रुद्राय स्वाहा। ॐ नमो भैरवाय स्वाहा। ॐ नमो गणेश्वराय स्वाहा। ॐ नमो दुर्गायै स्वाहा। ॐ महा-शान्तिक-भूत-प्रेत-पिशाच-राक्षस-ब्रह्म-राक्षस-सर्प-वेताल-वृश्चिक-भय-विनाशनाय स्वाहा।

ॐ पूर्व-दिशायां वज्रको नाम राक्षस स-दारस्य वज्रकस्याष्टादश-कोटि-सहस्रस्य पिशाचस्य दिशो बध्नामि नमः स्वाहा। ॐ अस्त्राय फट् स्वाहा। ॐ नमो भगवते रुद्राय स्वाहा। ॐ नमो भैरवाय स्वाहा। ॐ नमो गणेश्वराय स्वाहा। ॐ नमो दुर्गायै स्वाहा।

ॐ अग्नि - दिशायां अग्नि - ज्वालको नाम राक्षसस्याग्नि-ज्वालस्याष्टाष्टक-दश-कोटि-सहस्रस्य पिशाचस्य दिशां बध्नामि नमः स्वाहा। ॐ अस्त्राय फट् स्वाहा। ॐ नमो भगवते रुद्राय स्वाहा। ॐ नमो भैरवाय स्वाहा। ॐ नमो गणेश्वराय स्वाहा। ॐ नमो दुर्गायै स्वाहा।

ॐ दक्षिण-दिशायां पिङ्गलिको नाम राक्षसस्तस्य पिङ्गलिकस्याष्टादश - कोटि - सहस्रस्य पिशाचस्य दिशां बध्नामि नमः स्वाहा। ॐ अस्त्राय फट् स्वाहा। ॐ नमो भगवते रुद्राय स्वाहा। ॐ नमो भैरवाय स्वाहा। ॐ नमो गणेश्वराय स्वाहा। ॐ नमो दुर्गायै स्वाहा।

ॐ निऋति-दिशायां मारीचिको नाम राक्षसस्तस्य मरीचिकस्याष्टादश - कोटि - सहस्रस्य पिशाचस्य दिशां बध्नामि नमः स्वाहा। ॐ अस्त्राय फट् स्वाहा। ॐ नमो भगवते रुद्राय स्वाहा। ॐ नमो भैरवाय स्वाहा। ॐ नमो गणेश्वराय स्वाहा। ॐ नमो दुर्गायै स्वाहा।

ॐ पश्चिम-दिशायां मकरो नाम राक्षसस्तस्य मकरास्याष्टादश-कोटि-सहस्रस्य पिशाचस्य दिशां बध्नामि नमः स्वाहा। ॐ अस्त्राय फट् स्वाहा। ॐ नमो भगवते रुद्राय स्वाहा। ॐ नमो भैरवाय स्वाहा। ॐ नमो गणेश्वराय स्वाहा। ॐ नमो दुर्गायै स्वाहा।

ॐ नमो वायव्य - दिशायां कूष्माण्डको नाम राक्षसस्तस्य कूष्माण्डकस्याष्टादश-कोटि सहस्रस्य पिशाचस्य दिशां बध्नामि नमः स्वाहा। ॐ अस्त्राय फट् स्वाहा। ॐ नमो भगवते रुद्राय स्वाहा। ॐ नमो भैरवाय स्वाहा। ॐ नमो गणेश्वराय स्वाहा। ॐ नमो दुर्गायै स्वाहा।

ॐ हिमवन्तोत्तरस्य दिशायां महा-भीमो नाम राक्षसस्तस्य महा-भीमस्याष्टादश-कोटि-सहस्रस्य पिशाचस्य दिशां बध्नामि नमः स्वाहा। ॐ अस्त्राय फट् स्वाहा। ॐ नमो भगवते रुद्राय नमः स्वाहा। ॐ नमो भैरवाय स्वाहा। ॐ नमो गणेश्वराय स्वाहा। ॐ नमो दुर्गायै स्वाहा।

ॐ ईशान-दिशायां भैरवो नाम राक्षसस्तस्य भैरवस्याष्टादश-कोटि - सहस्रस्य पिशाचस्य दिशां बध्नामि नमः स्वाहा। ॐ अस्त्राय फट् स्वाहा। ॐ नमो भगवते रुद्राय स्वाहा। ॐ नमो भैरवाय स्वाहा। ॐ नमो गणेश्वराय स्वाहा। ॐ नमो दुर्गायै स्वाहा।

ॐ अन्तरिक्ष-दिशायां मन्त्र-रूपो नाम राक्षसस्तस्यान्त-रूपस्याष्टादश - कोटि - सहस्रस्य पिशाचस्य दिशां बध्नामि नमः स्वाहा। ॐ अस्त्राय फट् स्वाहा। ॐ नमो भगवते रुद्राय स्वाहा। ॐ नमो भैरवाय स्वाहा। ॐ नमो गणेश्वराय स्वाहा। ॐ नमो दुर्गायै स्वाहा।

ॐ ब्रह्मणो दिशायां ब्रह्म-स्वरूपो नाम राक्षसस्तस्य ब्रह्म-स्वरूपस्याष्टादश-कोटि-सहस्रस्य पिशाचस्य दिशां बध्नामि नमः स्वाहा। ॐ अस्त्राय फट् स्वाहा। ॐ नमो भगवते रुद्राय स्वाहा। ॐ नमो भैरवाय स्वाहा। ॐ नमो गणेश्वराय स्वाहा। ॐ नमो दुर्गायै स्वाहा।

ॐ ऊर्ध्व - दिशायां खेचरिको नाम राक्षसस्तस्य खेचरिकस्याष्टादश - कोटि - सहस्त्रस्य पिशाचस्य दिशां बध्नामि नमः स्वाहा। ॐ अस्त्राय फट् स्वाहा। ॐ नमो भगवते रुद्राय स्वाहा। ॐ नमो भैरवाय स्वाहा। ॐ नमो गणेश्वराय स्वाहा। ॐ नमो दुर्गायै स्वाहा।

ॐ सर्वतो - दिशायां गरुडारूढं शङ्ख-चक्र-गदा-पद्म-हस्तेन श्रीनृसिंह-वन्दित बन्ध बन्ध, रक्ष रक्ष, माचल माचल, माक्रम्य माक्रम्य, कुरु कुरु फट् स्वाहा। ॐ अस्त्राय फट् स्वाहा। ॐ नमो भगवते रुद्राय स्वाहा। ॐ नमो भैरवाय स्वाहा। ॐ नमो गणेश्वराय स्वाहा। ॐ नमो दुर्गायै स्वाहा। ॐ महा-शान्तिक-भूत-प्रेत-पिशाच-राक्षस-ब्रह्म-राक्षस-सर्व-वेताल-सर्प-वृश्चिक-भय-विनाशनाय स्वाहा।

ॐ शिखां मे रक्षतु ब्रह्माणी ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रें ह्रैं ह्रों ह्रौं ह्रं ह्रः ह्रूं फट् स्वाहा।
ॐ शिरो-रोगे रक्षतु मातेश्वरी ॐ ह्रां ह्रीं व्रीं क्लीं क्षौं धूं हूं फट् स्वाहा।
ॐ कण्ठं मे रक्षतु वैष्णवी ॐ ह्रां ह्रीं व्रीं क्लीं क्षौं धूं हूं फट् स्वाहा।
ॐ भुजौ मे रक्षतु योगेश्वरी ॐ ह्रां ह्रीं व्रीं क्लीं क्षौं धूं हूं फट् स्वाहा।
ॐ कुक्षौ मे रक्षतु नव - दुर्गा ॐ ह्रां ह्रीं व्रीं क्लीं क्षौं धूं हूं फट् स्वाहा।
ॐ नाभौ मे रक्षतु वाराही ॐ ह्रां ह्रीं व्रीं क्लीं क्षौं धूं हूं फट् स्वाहा।
ॐ गुदं मे रक्षतु चामुण्डा ॐ ह्रां ह्रीं व्रीं क्लीं क्षौं धूं हूं फट् स्वाहा।
ॐ जङ्घे मे रक्षतु भैरवी ॐ ह्रां ह्रीं व्रीं क्लीं क्षौं धूं हूं फट् स्वाहा।
ॐ पादौ मे रक्षतु विनायकी ॐ ह्रां ह्रीं व्रीं क्लीं क्षौं धूं हूं फट् स्वाहा।
ॐ सर्वतो रक्षतु नारसिंही ॐ ह्रां ह्रीं व्रीं क्लीं क्षौं धूं हूं फट् स्वाहा।

ॐ अस्त्राय फट् स्वाहा। ॐ नमो भगवते रुद्राय स्वाहा। ॐ नमो भैरवाय स्वाहा। ॐ नमो गणेश्वराय स्वाहा। ॐ नमो दुर्गायै स्वाहा। ॐ महा-शान्तिक-भूत-प्रेत-पिशाच-राक्षस-ब्रह्म-राक्षस-सर्व-वेताल-सर्प-वृश्चिक-भय-विनाशनाय स्वाहा।

ॐ परिणामे महा-विद्या, महा-देवस्य सन्निधौ। एक-विंशति-रात्रेण, जपित्वा सिद्धिमाप्नुयात्।।
यदि न सिद्ध्यते वापि, रुद्रो वै ब्रह्महा भवेत्। पठित्वा यस्तु न पठेत्, एतदा ब्रह्महा भवेत्।।
स्त्रियो वा पुरुषो वापि, पापं भस्म समाचरेत्। पठेत् वा पाठयेत् वापि, सर्व-कार्येषु सर्वदा।।
दुष्टानां मारणं चैव, साधकानां सुखावहम्। सर्व-कार्येषु सिद्धि स्यात्, शान्ति- कर्मे विशेषतः।।
माहेश्वरी महा-विद्या महा-देवेन निर्मिता। चक्रेश्वरी शिवा शान्ता, शान्तिदा भवति ध्रुवम्।।
जपेन हरते शत्रून्, जपेन सिद्धि-भाग् भवेत्। द्रावणे स्तम्भने चैव, मारणे मोहने तथा।
सर्व-कार्येषु सिद्धि स्यात्, शान्ति-कर्मे विशेषतः।।

।। इति महा-विद्या सम्पूर्ण शुभम् नमः ।।

महा-विद्या-हवन-विधि

भूर्ज-पत्रे त्विदं यन्त्रं, लिखेत् गोरोचनेन च। वितस्ति-मात्रे भूमौ च, निखनेत् तु प्रयत्नतः।। तदूर्ध्वं वेदिकां कृत्वा, अग्नि-स्थापनं यथा-विधिः। सर्व-कार्येषु कर्तव्यं, होम-मन्त्रो यथा-विधि।।

भोज-पत्र पर गोरोचन या चन्दन अथवा दोनों को मिलाकर उससे अनार की लेखनी द्वारा **चौंसठ वर्गों का चतुरस्र** लिखे। प्रत्येक वर्ग के मध्य में **'ह्रीं'** बीज लिखे। इस यन्त्र को **हवन-वेदी** के नीचे इस प्रकार गाड़ दे कि वह जलने न पाए। इसके लिए यह ध्यान रखे कि **'यन्त्र'** से डेढ़ हाथ के ऊपर **'हवन-वेदी'** रहे। **'हवन'** के बाद विशेष रूप से **भूत-शान्ति, ग्रह-शान्ति, ज्वर-शान्ति** के लिए निम्न-लिखित मन्त्र का **१०८ बार 'जप'** करना चाहिए। **'अमुकं अमुकीं वा'** के स्थान पर **बाधा-ग्रस्त पुरुष या स्त्री का नाम** लेना चाहिए। यथा– **ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ह्रीं त्रिपुरे महा-विद्ये 'अमुकं अमुकीं वा' आकर्षय स्वाहा।**

***

महा-विद्या-पूजन-सामग्री

शर्करा घृत खाण्डानि, हविष्यं गुग्गुलं तथा। पञ्च-मेवा मधुं चैव, लवङ्गं लायचिं तथा।। पूगी-फलं च ताम्बूलं, तण्डुलाक्षतमेव च। नारिकेलं च पुष्पं च, दुकूलं पद्मामेव च।। पद्म- पुष्पं रक्तं-पुष्पं, च धूप-दीपकं तथा। नैवेद्यं चैव ताम्बूलं, दक्षिणा स्वर्ण-मेव च।। अर्कः पलाशः खदिरः, अपामार्गोऽथ पिप्पलः। औदुम्बर-शमी-दूर्वा, कुशां च समिधः क्रमात्।। ग्रह-प्रेतये समिधः।

महा-विद्या-दीप-मन्त्र

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं दीप-स्वरूपे, महा-विद्ये, प्रचण्ड-पराक्रमे, सर्व-भूत-प्रभञ्जिनि, सर्व-दुष्ट-ग्रह-द्राविणि, पर-यन्त्र-पर-तन्त्र-पर-कृत-पर-विद्या-प्रभञ्जिनि! इदं दीपं गृहण गृहण, मम शत्रून् मर्दय मर्दय स्वाहा।

महा-विद्या-स्तव-पुरश्चरण विधिः

भूत-प्रेत-पिशाचानां, डाकिन्यां ब्रह्म-राक्षसाम्। पठेत् सप्त-रात्रिं तु, होमं कृत्वा त्रयायुतम्।। साकल्यं पायसश्चैव, कटु - तैलं च सर्षपम्। त्रि-पाठं प्रत्यहं कुर्यात्, एक-विंशति-दिनानि च। दशांशं हवनं कुर्यात्, दशांशं चैव तर्पणम्। दशांशं मार्जनं चैव, दशांशं द्विज - भोजनम्। दशांशं दक्षिणा देया, कार्य - सिद्धिर्न संशयः।।

'रुद्र-यामले' दश-रात्रौ विधिस्तथा

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि, हवनं कार्यमुत्तमम्। स्तम्भने रक्त-पुष्पाणि, कार्य-सिद्धिस्तु जायते।। मारणे च सुरा मांसं, सद्यो याति यमालयम्। दधि-होमं विग्रहे चैव, उच्चाटने रुधिरस्तथा।।

ग्रह-शान्तौ पयः पक्वान्नं, ज्वर-शान्तौ च चन्दनं। रोग-शान्तौ तथा दुग्धं, भूमि-कामे च पायसम्।।
ब्रह्म-भूत-पिशाचेभ्यो, ग्रहेभ्यो क्लेश-शान्तये। रोगादि-शान्ति-कर्मणि, गृह-मध्ये तु स्थापयेत्।।
स्मरणे पुत्र-कामे तु, शान्ति-कामे तु गो-गृहे। कलशं स्थापनं कुर्यात्, पूजयेत् तु समाहितः।।
मारणे श्मशान-भूमौ, पठेत् स्तोत्रं समाहितः। उच्चाटने विग्रहे च, अश्वत्थस्य च मूलके।।

क्रोड-तन्त्रे

स्तम्भने पूर्व-मुखे च, मारणे दक्षिणं मुखम्। उच्चाटने विग्रहे च, पश्चिमाभिमुखं पठेत्।।
प्रेत-शान्तौ रोग-शान्तौ, शतावृत्तिं पठेन्नरः। त्रि-सन्ध्यमेकावृत्त्या तु, पठेत् साध्यमनुत्तमम्।।
मारणे उच्चाटने च, विग्रहे तु विशेषतः। त्रि-षष्ट्यावृत्ति-मात्रेण, कार्य-सिद्धिर्न संशयः।।
ग्रह-शान्तौ ज्वर-शान्तौ, रोग-शान्तौ विशेषतः। त्रि-वृत्त्या पठेन्नित्यं, त्रि-सन्ध्यं तु समाहितः।।
अन्ते च सर्व-कार्येषु, एक-विंशतिकं पठेत्।।

'रुद्र-यामले' लिङ्गार्चन-विधि

स्तम्भने रजनी (हरिद्रा) प्रोक्तं, मारणे लोह-मयं तथा। ज्वर-शान्तौ चन्दनं च, पृष्ठ-रोगे तु गोमयम्।।
पुत्र-कामे शालि-चूर्णं, भूत-शान्तौ रजतं तथा। ग्रह-शान्तौ अष्ट-धातून्, सर्व-कार्येषु मृन्मयम्।।

'वाराही-तन्त्रे'

स्तम्भने कांस्य-पात्रेण, उच्चाटने विग्रहे तथा। मारणे लोह-मयं पात्रं, इत्युक्तं रुद्र-यामले।।
ब्रह्म-राक्षस-भूतेषु, डाकिन्यां च विशेषतः। कार्यं पित्तल-पात्रं तु, तदा सिद्धिर्न संशयः।।
भूमि-कामे पुत्र-कामे, रोग-शान्तौ ज्वरादिषु। अष्ट-धातु-तमं पात्रं, पूजयेत् भक्ति- तत्परः।।
ग्रह - शान्तौ ताम्र-पात्रं, इत्यतः नान्यथा भवेत्।।

।। 'क्रोड-तन्त्रे' जप-विधिः, तन्मन्त्र अयुतं जपेत् सिद्धिः ।।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रें ह्रैं ह्रों ह्रौं ह्रं ह्रः ह्रूं स्वाहा।
ॐ क्रां क्रीं क्रूं क्रें क्रैं क्रों क्रौं क्रं क्रः स्वाहा।

।। सर्व-कार्येषु मूल-मन्त्र अयुतं जपेत् ।।

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं महा-विद्यायै स्वाहा।

–:: विशेष सूचना ::–

'श्रीमहा-विद्या-स्तोत्र' के पाठ के लिए नित्य परम्परा-गत रूप से **११ रुद्र-मूर्ति (पार्थिव शिव - लिङ्ग)** बनाएँ और उनकी पूजा करे। फिर **'पाठ'** करे। **सप्तमी, नवमी या चतुर्दशी के दिन 'हवन'** करे। **'पाठ'** की ४१, ३१, २१ या ११ आवृत्तियाँ करे। तब **'हवन'** करे। **आराधना** रात्रि में ११ बजे से ३ बजे तक करे। दिन में ९ से १२ बजे तक **तामस आराध्य** के लिए है। **राजस आराध्य** में ७ से १० बजे रात्रि में, दिन में ८ से ४ बजे तक। **सात्विक** किसी भी समय कर सकता है। **हविष्यान्न** का ही भोजन करे। **तैल** न खाएँ, **पीला वस्त्र** पहने, **सजल नारियल** देवी जी को चढ़ाएँ। **पीत अक्षत, पीत पुष्प, पीत चन्दन, पीला वेष्ठन** रखे। **'कुशा की मूँजी'** पाठ की पुस्तक में रखे। **'गोरोचन'** पास में अवश्य रखे।

'कौल-कल्पतरु' पण्डित देवीदत्त जी शुक्ल द्वारा विरचित :

कैसे करूँ तव सु-पूजन भक्ति-युत ?

दुर्गा-स्तुति

दुर्गे ! कराल - वदने वरदे भवानी, अम्बे सुरारि - हननी भव-दुःख-हन्त्री ।
हे दैत्य-वंश-तरु-मूल-विनाशिनी माँ, काली करालि ! सुनिए विनती हमारी ॥१

ये हैं पुनीत 'नव-रात्र' समाप्त भी हैं, पूजा कहाँ सविधि हो जननी ? बताओ ।
अत्यन्त ही कठिन है सब वस्तु पाना, सामान श्रेष्ठ तुमको प्रिय जो रहा है ! ॥२

हा हन्त ! 'तीर्थ' मिलना अति ही असाध्य, त्यों 'शुद्धि' भी विमल वस्तु अनूप भोज्य।
पीयूष-पूरित 'तृतीय' न पञ्चमादि, हों प्राप्त माँ ! कठिन कार्य यहाँ दिखाता ॥३

है भी नहीं जननि ! 'साधक' विज्ञ कोई, होता यहाँ मददगार करूँ स्व-पूजा ।
या मैं कहूँ निज कथा सुनिए भवानी, हा ! है अभाव मुझमें सुठि भक्ति का ही ॥४

क्यों मैं करूँ न चित दे सब भाँति तेरी, पूजा गुलाब-कुसुमादिक से अनूठी ।
गेंदा जुही बकुल पङ्कज चारु बेला, हैं पुष्प सुन्दर सभी मिलते अनेकों ॥५

'मुद्रा' भली विमल माखन शुद्ध दूध, मीठा दही सुघर मोदक भी मलाई ।
पेड़े सुस्वादु बढ़िया हलुआ जलेबी, बर्फी सँदेश खुर्मा मिलते सभी तो ॥६

क्या त्यों नहीं सुलभ हैं नमकीन चीजें, आलू रसाल-चटनी प्रिय दाल-मोट ?
औ हैं बड़े चरफरे अति ही कचालू, भण्टे भले सहित सेम हरी पलाकी ॥७

हैं भी मिलें तदपि नीच मलीन चित्त, आसक्त है विषय में कुछ भी न ठीक ।
लाके सकूँ कर सु-पूजन अम्ब ! तेरा, है किन्तु केवल नहीं धिक् ! हाय भक्ति ॥८

आत्माभिमान-मद में भ्रमता फिरूँ मैं, लज्जा नहीं तनिक भी, न हया जरा है ।
हा ! है कुभाव मन में यह तो समाया, मैं एक हूँ जगत् में बुध सत्य नान्य ॥९

विद्या - निधान हम पण्डित पूजनीय, भू-देव श्रेष्ठ अति ज्ञान सही हमारा ।
आचारवान यदि पण्डित व्यक्ति कोई, तो हैं हमीं बस यही कहता फिरूँ मैं ॥१०

मैं नीच दास बनता हत ज्ञान - हीन, अत्यन्त घोर अति ओज-समेत गर्व ।
कैसे करूँ तव सु-पूजन भक्ति-युक्त, दुर्गे, करालि ! जब है विषयाक्त चित्त ॥११

मैं तो कुपूत अति पामर दुष्ट अम्ब !, माता समान करती सबसे सनेह ।
माँ ! कीजिए अब तुरन्त क्षमा मुझे तू, मैं हूँ निकृष्ट अधमाधम दुष्ट ही हूँ ॥१२

***

पर्व-पत्र

वासन्तिक नव-रात्र 'हेमलम्ब' संवत् २०६१ विक्रमी

(चैत्र शुक्ला प्रतिपदा, 'रविवार' तदनुसार २१ मार्च, २००४ से)

- **चैत्र शुक्ला प्रतिपदा, रविवार** (२१ मार्च, २००४) : वासन्तिक नवरात्र प्रारम्भ। प्रात:काल सतैल स्नान। ध्वजारोहण। संवत्सर-फल-श्रवण। **घट-स्थापना। 'चण्डी'-पाठ।** सप्त-दिवसीय पाठ-कर्त्ता **'सप्तशती'** के **अध्याय १** का पाठ करें।
- **चैत्र शुक्ला द्वितीया, सोमवार** (२२ मार्च, २००४) : **'चण्डी'**-पाठ। सप्त-दिवसीय पाठ-कर्त्ता **अध्याय २-३** का पाठ करें।
- **चैत्र शुक्ला तृतीया, मङ्गलवार** (२३ मार्च, २००४) : सौभाग्य-सुन्दरी-व्रत। गौरी-दोलोत्सव (शिव-पार्वती-पूजन)। मत्स्यावतार तृतीया (अपराह्न)। गण-गौरी-व्रत। **'चण्डी'**-पाठ। सप्त-दिवसीय पाठ में **अध्याय ४** पढ़ें।
- **चैत्र शुक्ला चतुर्थी, बुधवार** (२४ मार्च, २००४) : वैनायकी श्रीगणेश-चतुर्थी-व्रत। 'चण्डी'-पाठ। सप्त-दिवसीय पाठ में **चार अध्याय ५-६-७-८** पढ़ें।
- **चैत्र शुक्ला चतुर्थी-पञ्चमी, बृहस्पतिवार** (२५ मार्च, २००४) : श्रीराम-राज्य-महोत्सव (अपराह्न)। **'चण्डी'**-पाठ। सप्त-दिवसीय पाठ में **अध्याय ९-१०** पढ़ें। (प्रात:-काल चतुर्थी)।
- **चैत्र शुक्ला पञ्चमी-षष्ठी, शुक्रवार** (२६ मार्च, २००४): श्री-पञ्चमी। **लक्ष्मी-पूजा।** श्रीस्कन्द-दमनकोत्सव-षष्ठी। 'चण्डी'-पाठ। सप्त-दिवसीय-पाठ में **११वाँ अध्याय** पढ़ें। (प्रात:काल पञ्चमी, दिन ९/९ के बाद षष्ठी)।
- **चैत्र शुक्ला षष्ठी-सप्तमी, शनिवार** (२७ मार्च, २००४): **'चण्डी'-पाठ।** सप्त-दिवसीय-पाठ में **अध्याय १२-१३** पढ़ें। (दिन : ११/१४ तक षष्ठी)।
- **चैत्र शुक्ला सप्तमी-अष्टमी, रविवार** (२८ मार्च, २००४) : श्रीभास्कर-दमनक-पूजा। श्रीअन्नपूर्णा-परिक्रमा। **'चण्डी'-पाठ।** रात्रि में **'चक्रार्चन', महा-निशा-पूजन।** (दिन १/२० तक सप्तमी, रात्रि में अष्टमी)।
- **चैत्र शुक्ला अष्टमी-नवमी, सोमवार** (२९ मार्च, २००४): श्रीमहा-अष्टमी-व्रत। श्रीभवानी-जयन्ती। 'चण्डी'-पाठ।
- **चैत्र शुक्ला नवमी-दशमी, मङ्गलवार** (३० मार्च, २००४): श्रीदुर्गा-नवमी। **श्रीतारा-जयन्ती। श्रीराम-नवमी।** कुमारी-पूजन। हवन। सायं-काल दशमी में 'नवरात्र'-व्रत का पारण।
- **चैत्र शुक्ला दशमी, बुधवार** (३१ मार्च, २००४) : प्रात:काल दशमी का पारण। विसर्जन।
- **चैत्र शुक्ला एकादशी, बृहस्पतिवार** (१ अप्रैल, २००४) : कामदा एकादशी। श्रीविष्णु-दोलोत्सव-एकादशी।
- **चैत्र शुक्ला द्वादशी, शुक्रवार** (२ अप्रैल, २००४) : स्थायी-जय-योग, रवि-योग।
- **चैत्र शुक्ला त्रयोदशी, शनिवार** (३ अप्रैल, २००४) : श्रीअनङ्ग-त्रयोदशी-व्रत। पुत्र-प्राप्ति हेतु **शनि-प्रदोष-व्रत।**
- **चैत्र शुक्ला-चतुर्दशी, रविवार** (४ अप्रैल, २००४) : श्रीशिव-नृसिंह दमनकोत्सव। व्रत की पूर्णिमा।
- **चैत्र पूर्णिमा, सोमवार** (५ अप्रैल, २००४) : स्नान-दान की पूर्णिमा। सर्व-देव-दमनकोत्सव।
- **वैशाख कृष्णा अष्टमी, सोमवार** (१२ अप्रैल, २००४) : श्रीशीतला-अष्टमी।
- **वैशाख शुक्ला तृतीया, गुरुवार** (२२ अप्रैल, २००४) : अक्षय-तृतीया। **श्रीपरशुराम-जयन्ती।**
- **वैशाख शुक्ला पञ्चमी, शनिवार** (२४ अप्रैल, २००४) : श्रीआदि-शङ्कराचार्य जयन्ती।

***